बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

फरवरी, 1989

रु. 4.00

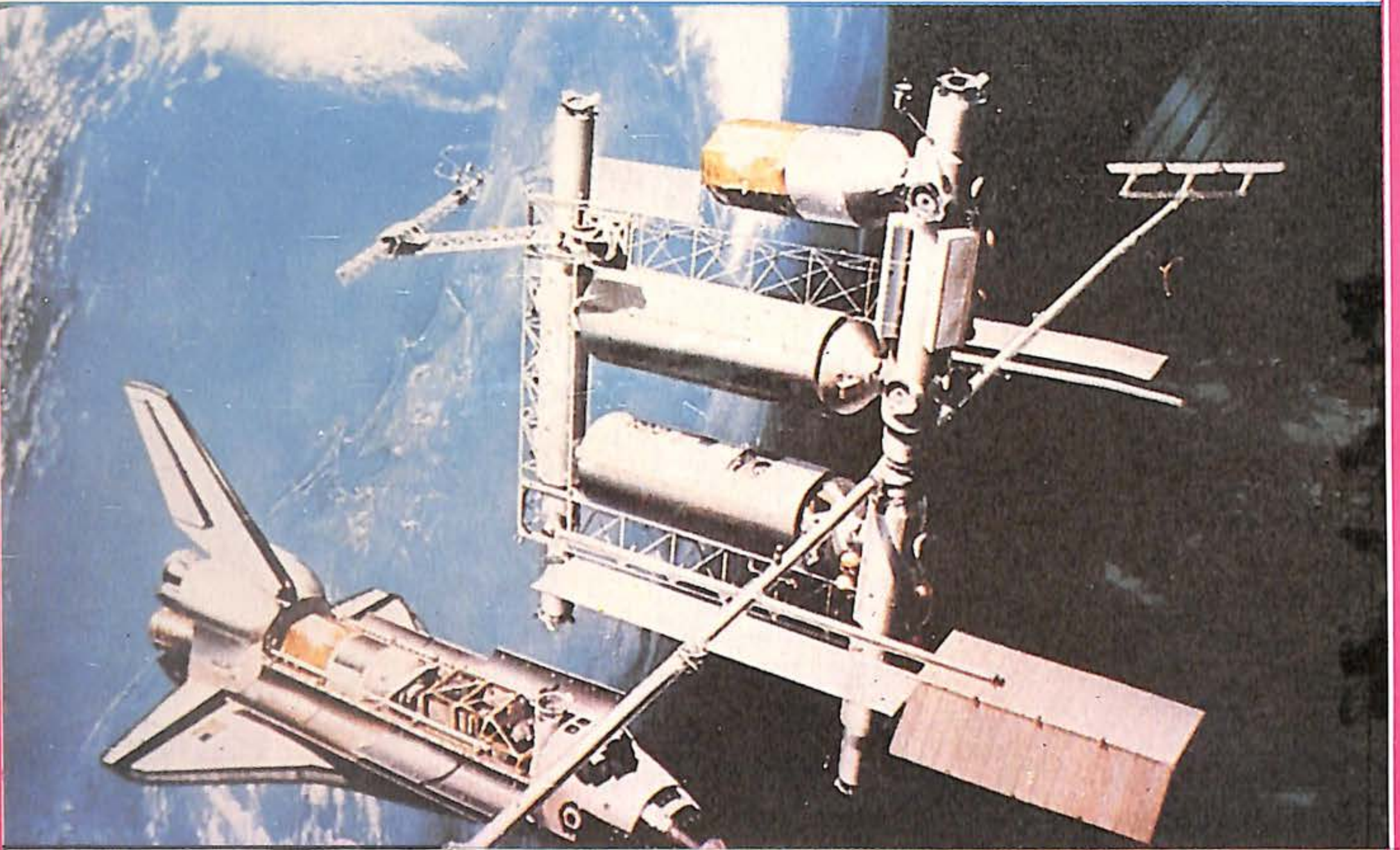

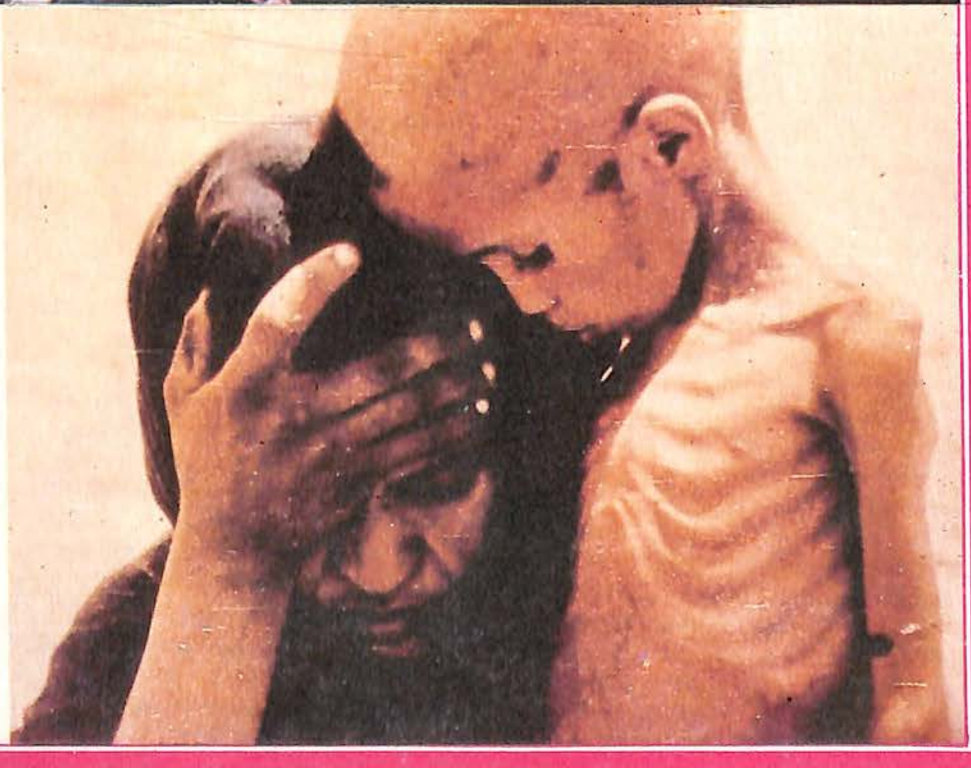

पृथ्वी से आकाश तक
डोर बंधी विकास की!
फिर भी भूख से बेहाल है
क्यों यह दुनिया आज की?!

धर्मेन्द्र पाटीदार, आठ वर्ष, मानकुंड, देवास

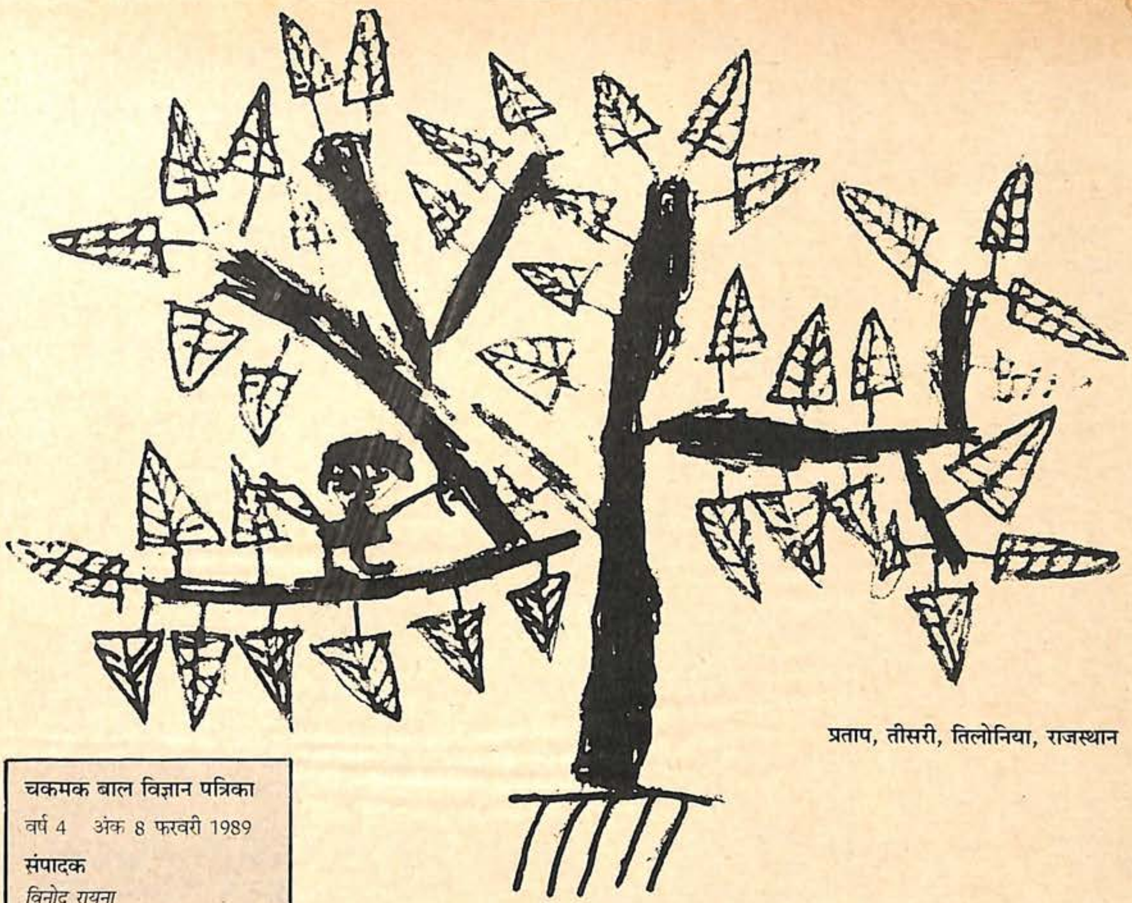

प्रताप, तीसरी, तिलोनिया, राजस्थान

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका
वर्ष 4 अंक 8 फरवरी 1989

संपादक
विनोद रायना

सह-संपादक
राजेश उत्साही

कला
जया विवेक

उत्पादन/वितरण
हिमांशु बिस्वास, कमलसिंह

चकमक का चंदा
एक प्रति : चार रुपए
छमाही : बीस रुपए
वार्षिक : चालीस रुपए
डाक खर्च मुफ्त
चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।
कृपया चेक न भेजें।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता :
एकलव्य,
ई-1/208, अरेरा कालोनी,
भोपाल-462 016 (म.प्र.).

कागज़ : 'यूनिसेफ' के सौजन्य से
सहयोग : राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली)

इस अंक में

चकमक दोस्त	2
मेरा पन्ना	3
सवालीराम	7
मारी क्यूरी	8
अपनी प्रयोगशाला	15
कविता : अगर हमारे हाथ-पांव न होते	16
हमारा भविष्य	18
कहानी : दो गौरैयां	26
खतरा; स्कूल : भाग-छह	29
माथापच्ची	34
कविता : खिचड़ी	36
कहानी : सत्य की खोज	37
गिजुभाई की कलम से	39

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

चकमक दोस्त

1. नाम
2. रुचियां
3. पता

1. जयंत दीवान, 14 वर्ष
2. माडल बनाना, माचिस एकत्र करना, शतरंज खेलना
1. हेमंत दीवान, 12 वर्ष
2. फुटबाल खेलना, तबला बजाना
दोनों का पता : 556/N-2/B-सेक्टर, गोविंदपुरा, भोपाल

1. ज्ञानेश्वर व्यास, 14 वर्ष
2. पेंटिंग करना, कविता लिखना, बेडमिंटन खेलना
1. भुवनेश्वर व्यास, 10 वर्ष
2. क्रिकेट खेलना, साइकिल चलाना, हॉकी खेलना
1. पुष्पकला व्यास
2. फुटबॉल एवं बेडमिंटन खेलना
सबका पता : 483, N-3, ए-सेक्टर, गोविंद पुरा, भोपाल

1. निकुंज क्षत्रिय, 6 वर्ष
2. किताब प्रढ़ना
3. इंदिरा नगर, 8/203, नीमच, म.प्र.

1. अनिल बाकलीवाल, 19 वर्ष
2. पत्र मित्रता, टिकट व पुराने सिक्कों का संग्रह व क्रिकेट खेलना
3. द्वारा लालचंद बाकलीवाल, 29, महावीर मार्ग, हाटपीपल्या, देवास-455 223

1. गजेन्द्र मालवीय, 13 वर्ष
2. पत्रिकाएं पढ़ना, शतरंज, खेलना
3. 163, किंग स्ट्रीट, हरसूद-450 116

1. भीमसेन गुप्ता, ग्यारहवीं
2. दोस्तों को हंसाना, चकमक पढ़ना, क्रिकेट खेलना
3. पोस्ट ऑफिस के सामने, पत्थलगांव, रायगढ़-496 118

1. भंवरसिंह, 14 वर्ष
2. किताबें पढ़ना, विज्ञान के नए-नए प्रयोग करना
3. स.मा.वि. अमलेटा, रतलाम

1. आनंद कुमार श्याम, नवमीं
2. चकमक पढ़ना, कराटे खेलना, मित्र बनाना
3. ग्राम घिनौची, सिवनी

1. प्रमोद पगारे, दसवीं
2. पढ़ना, टी.वी. देखना
3. हाई स्कूल बलवाड़ा,खरगोन

1. रूपाली कैलाश वर्मा, सातवीं
2. गुरु चेला खेलना
3. शा.हि. कन्या मा.वि. सांवेर, इंदौर

1. संतोष सोनगरा, 13 वर्ष
2. टी.वी. देखना, चित्र बनाना
3. शा.मा.वि. कांजर, बागली, देवास

1. आनंद वर्मा, आठवीं
2. किताबें पढ़ना, चित्रकारी करना
3. माध्यमिक शाला शाहपुर, बैतूल-460 440

1. कमलसिंह मुकाती, 15 वर्ष
2. चकमक पढ़ना, खेलना
3. नंदगांव, नसरुल्लागंज, सीहोर

1. उमेश पाण्डेय
2. वैज्ञानिक कार्य एवं अनुभव
3. बिलौरा, पोस्ट-हँसरबाजार, जिला-बस्ती, उ.प्र. 272 165

1. मीनाक्षी शुक्ला, 13 वर्ष
2. संगीत, कविता, फिल्म देखना, बैडमिंटन खेलना
3. द्वारा शेषाद्री शुक्ला, अलिनगर, नाथनगर, बस्ती, उ.प्र.

1. तरन्नुम खानम, छटवीं
2. पढ़ना, केरम खेलना, समय पर काम करना
3. 6, शर्मिला नगर, स्टेशन रोड़, देवास

1. कमलेश कुमार वर्मा
2. ज़्यादा पढ़ना, चित्र बनाना, क्रिकेट खेलना
3. आलमपुर, भिण्ड

1. श्वेता तेजपाल जैन, सातवीं
2. पढ़ना, खेलना, टी.वी. देखना
3. ग्राम-दोगांवां, कसरावद, खरगोन

1. कुमारी प्रभा वर्मा, सातवीं
2. चकमक पढ़ना, टी.वी. देखना
3. द्वारा संतोष वर्मा, तोंगपाल, बस्तर-494 115

1. दीपक खैरिया, 18 वर्ष
2. खेती-बाड़ी में मस्त रहना, नई-नई फसलें व उनकी जानकारी करना, आगे पढ़ने के इच्छुक हैं.
1. कैलाश खैरिया, 14 वर्ष
2. साइकिल चलाना, घूमना-फिरना एवं नई-नई पिक्चर देखना.
1. गणेश खैरिया, 9 वर्ष
2. बबूल के कांटों से नई-नई चीज़ बनाना, साइकिल चलाना, खेलना
1. मोहन लाल खैरिया, 16 वर्ष
2. पढ़ना, प्रथम श्रेणी में पास होने की कोशिश करना
1. राधेश्याम खैरिया
2. खेल-खेल में काम करना, पढ़ना, दो बैलगाड़ियां एक साथ चला सकते हैं.
संतोष खैरिया
2. गाने-गाना, रेडियो सुनना
1. चंदा खैरिया
2. खेलना, पढ़ना, नए-नए व्यंजन खाना एवं बनाना
सबका पता : बम्हन गांव, खामापड़मा, हरदा, जिला - होशंगाबाद

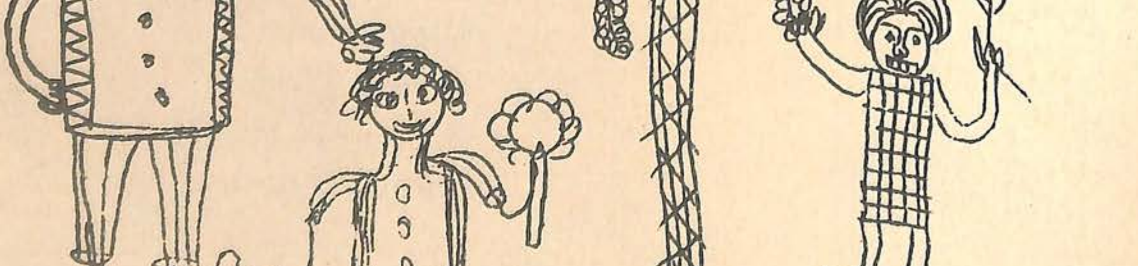

चित्र : राधेश्याम, छटवीं, मानकुंड. देवास

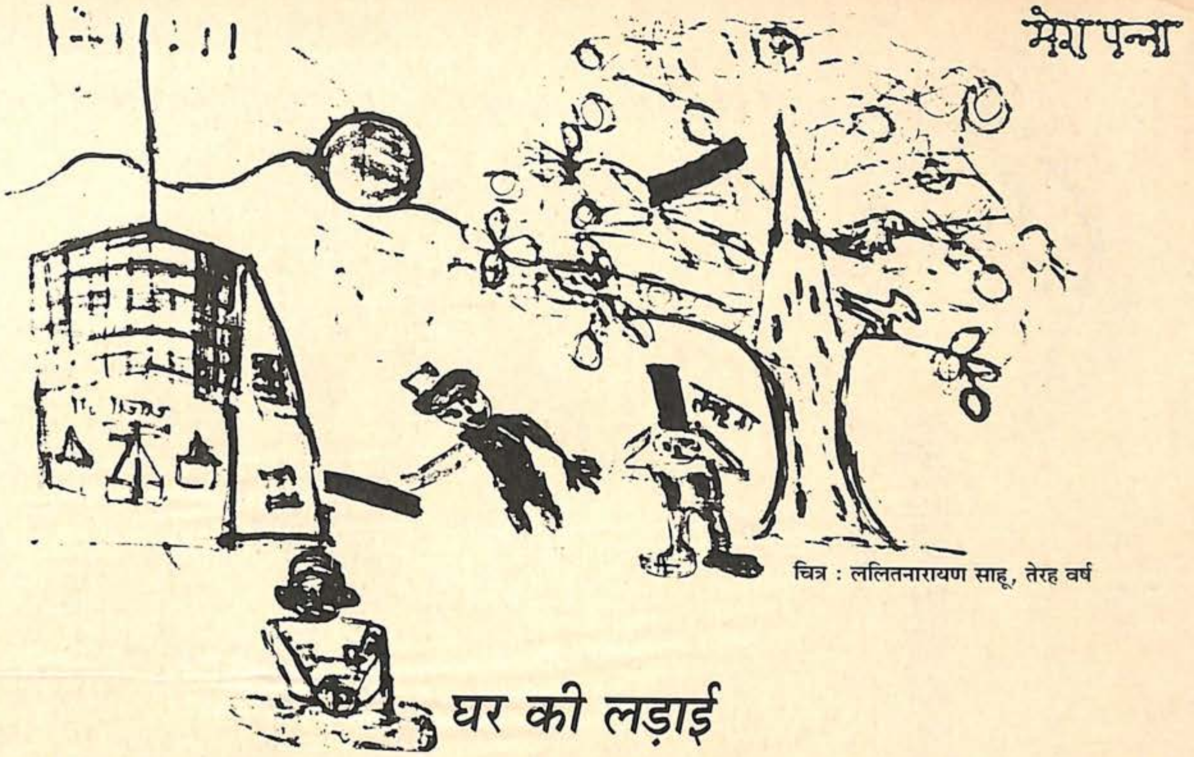

चित्र : ललितनारायण साहू, तेरह वर्ष

घर की लड़ाई

हमारे गांव में एक रजक रहता था। उसका नाम दमडू था। उसके परिवार के सदस्य में 5 लड़के एवं 5 लड़कियां थीं। तो उसका एक मंझला लड़का बहुत खराब था वो ऐसा था कि गांव में लाठी रखे फिरता था। किसी ने कुछ कहा तो उसने लाठी घुमा दी। भैया गांव वालों ने तो समात करली मगर उसके घर वालों को जता देते थे कि भैया तेरा लड़का बहुत खराब है।

कल मेरे बूढ़े दादा हे लट्ठ घुमान लगो और कहन लगो एक लट्ठ में मूढ़ बगरा देहों, तू सीधे से घर जा। दादा घर चलो गव। कायरे दमडू तेरे मोड़ा मंझले की मार खेहें। वो दादा बोलो एक आद दिना खेत तन मिल गयो तो सपा चट्ट कर दो। गांव भर में सांड बन रहो है। घर के 4 भाई एवं दमडू ने कहा के भैया वो तो गांव में रंगदारी बतान लगौ अब अपन समात नहीं करें, छोटो मोड़ा बोलो दादू भैया पटैल से लड़ रहो थो।

जब बो गांव में से 12 बजे घर आयो, आनके महतारी से कई काय बाई रोटी बन गई। उन्होंने तो सलाह करी थी कि वाहे खावे नहीं देवें। बाई काय नहीं बोले रोटी साग है कि नहीं है। ठटरी खावे, गाली देकर कहा। जा तुहे दिखावे जहां चलो जा। फिर बा मझले ने कई कि रोटी है का नहीं बाई जल्दी बोल? कहा नहीं हैं रोटी-मोटी जा तोहे दिखाए जहां जा। बाने लठिया उठाई और महतारी के ऊपर पीट पर दे मारी। महतारी ने फिर धाय दई (रोना शुरू) जोर से रोन लगी। दमडू और उसके चार मोड़ा आये। छोटे मोड़ा ग्यारसी ने कहा दाऊ भैया ने बाई के मूढ़ और पीठ में लट्ठ दओ तो रो रही है। वे लोग पांच आदमी आये उन्ने ऊर करी ने पूर मंझले के पांच आदमो ने पांच लट्ठ हचके। मंझले ने सांस नहीं ली। जब तक की हलत रहो तब तक मारो फिर सुन्न सान पड़ो रहो। फिर मारवो बन्द करदव। फिर बाहे अस्पताल ले गये।

तो फिर वो अच्छो हो गओ और फिर फिर थाने में गया और उसने कहा हुजूर मेरे पिता और तीन भैयों ने मारो। पुलिस बाबू तो जई चाह रहे थे कि कब तो हमें चाय, पान है पैसा मिल जाए। उन्होंने फिर अपनी साइकिल उठाई टोपी लगाई, डन्डा उठा के चल दिए। तनक और आगे हे जाकर मिल तो गए और पुलिस ने दमडू से पूछा कायरे तूने काय मारो? डोकरे ने कहा साब उसने महतारी हे कूट मारी वा घर में रो रई थी। ते हमने जासे पूछी कायरे काये खों मारी, जो हजूर मेरे ऊपर लटिया घुमान लगो बस जो भव है। बाबू ने कई चलो दोनों और डुकरा व डुकरिया हे ले गओ और जाकर दोनों हे बंद कर दओ। हुजूर जो का। बाबू जी बोले 'कानून'। डुकरा ने कहा 'अंधा कानून'। घर में लड़ाई, लौचा-खौची। बाबू बोले पांच सौ रुपए देजा तेरे लड़के ने कहा है। डुकरा बोलो हजूर अढ़ाई सो रुपये हैं देदे ला ठीक हैं, इतने ढेर हैं। दोनों के दो-दो डन्डा मारे, भगत आ गये फिर बो लड़का ठीक हुआ।

☐ हीरालाल पटैल, आठवीं, रानी पिपरिया (बालचिरैया)

तितलियों के चक्कर में गप्पू मधुमक्खियों से जा भिड़ा

चित्र : दिलीप कुमार शर्मा, पिपल्या मंडी, मंदसौर

तितलियों को देखकर, गप्पू अपने आप को रोक नहीं पाता। हमेशा जब भी बाहर निकलता अपने हाथ में एक डंडा लिए तितलियों के पीछे भागता। वह तितलियों को पकड़ कर बड़े ध्यान से रंग, पंख, पैर, आंखें आदि अंगों को तोड़-मरोड़ कर बारीकी से देखता।

गप्पू के दोस्त उसको चिढ़ाते कि क्या पागलों की तरह तू तितलियों के पीछे दौड़ता है और उनको मार कर पाप लेता है। फिर भी रंग बिरंगी तितलियों को देख कर वह अपने को रोक नहीं पाता था।

ऐसे घूमते-घूमते गप्पू ने अनजाने में एक बार मधुमक्खी के छत्ते पर एक डंडा दे मारा बस क्या था ढ़ेरों मधुमक्खियों का झुंड गप्पू के ऊपर टूट पड़ा। गप्पू जिधर भागता पीछे-पीछे मधुमक्खियां धावा बोलती रहीं। आख़िर गप्पू के बालों में, मुंह एवं कान इत्यादि कई जगह मधुमक्खियां जम कर काटने लगीं। गप्पू चिल्लाने लगा। काफी देर बाद मधुमक्खियों से पीछा छुड़ा पाया और अपना सूजा हुआ चेहरा लेकर घर की ओर लौटा।

□ विवेक खरे, पांचवी, देवास
(बालकलम)

सब्ज़ी बाज़ार में भीगे

एक दिन की बात है। घर पर मेहमान आने वाले थे। मैं अपने भाई के साथ सब्ज़ी लेने चल दी। उस दिन मौसम बहुत सुहावना था। हम दोनों जब बाज़ार के करीब पहुंचने लगे तो खूब भीड़-भाड़ थी। क्योंकि उस दिन काफ़ी बादल छाए हुए थे। जब हम लोग सब्ज़ी बाज़ार पहुंचे तो खूब तेज़ से हवा चलने लगी। सभी दुकानदार चौकन्ने हो गये कि कहीं पानी न बरसने लगे। कुछ देर में सचमुच हवा के झोंकों के साथ बड़े ज़ोर से पानी बरसना शुरू हो गया। अब तो बाज़ार में भगदड़ मच गई। लोग भीगते हुए भागने लगे और

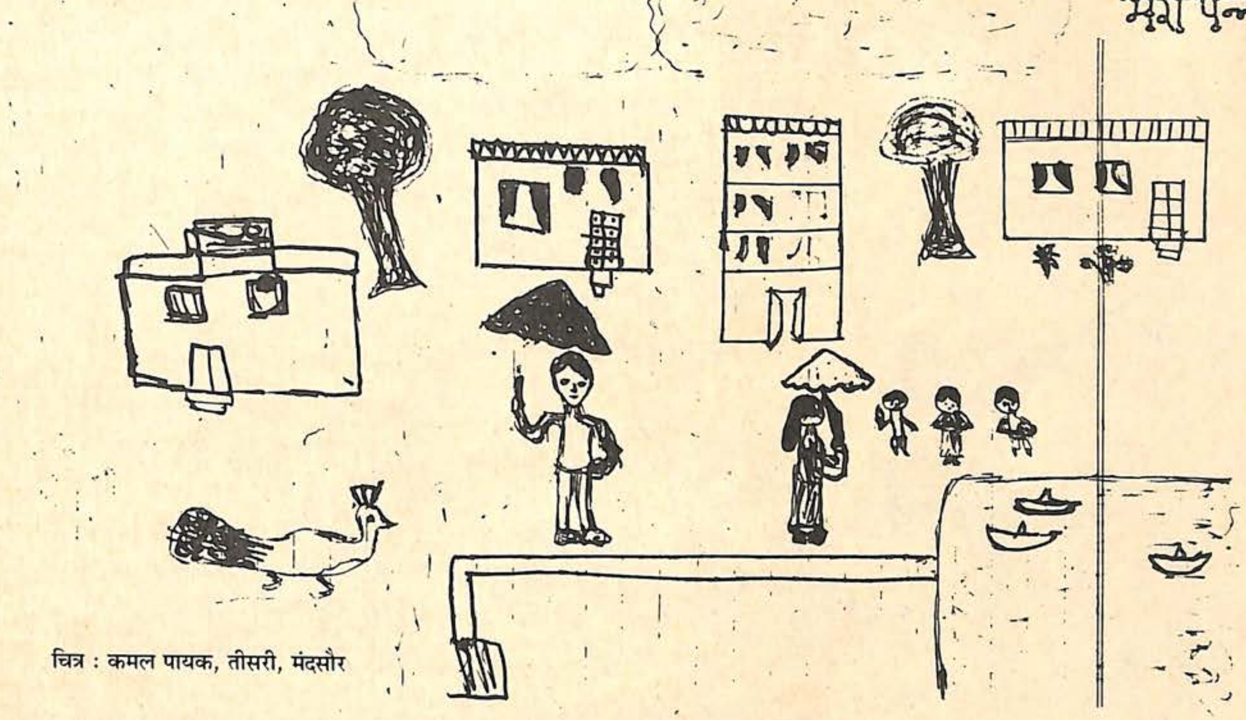

चित्र : कमल पायक, तीसरी, मंदसौर

कई तो दुकानों में अपने आप को भीगने से बचाने लगे। अब हम लोग भी भीग गए थे। उसी सब्ज़ी वाले के छप्पर के नीचे किसी तरह ठिठुरते रहे।

हम लोग जब बरसात रुकी, तब बाहर निकले। उस समय सड़कों पर गलियों का पानी एक जुट होकर बह रहा था। सभी दुकानें समेटने लगे। अपन लोग भी गीले कपड़े में सिमटे और ठिठुरते हुए अपने घर की ओर चल पड़े। सब्ज़ी वगैरह कुछ नहीं ली। जब घर पहुंचे तो काफ़ी देर हो गई थी। उस दिन जो मेहमान आने वाले थे वे भी नहीं आए।

☐ वन्दना मालवीय, आठवीं, देवास
(बालकलम)

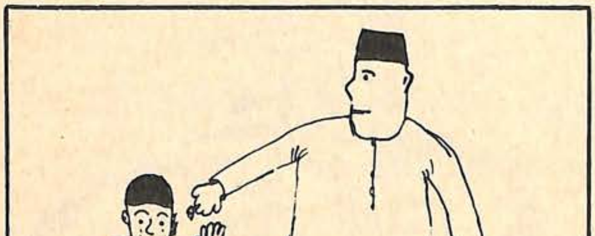

मरकने गुरूजी

हम स्कूल में कबड्डी खेल रहे थे तो मैं कबड्डी कहने के लिए गया था तो मुझे पटक दिया। मेरा पेन्ट गोबर में खब गया। तो मैं घर पर गया कपड़ा बदलने। घर से स्कूल आया। गुरूजी बोले तुम कहां गए थे तो मैंने कहा, मैं कबड्डी खेल रहा था। मेरे कपड़ा गोबर में खराब हो गए। कपड़ा बदलने गया था। गुरूजी ने बहुत मारा और कहा, तुम कहां गए थे ?

☐ शंकर ठाकुर, पांचवी, पलिया पिपरिया
(बालचिरैया)

इंगलिश वाले टीचर

हमारे इंगलिश वाले टीचर
इंगलिश वाले पीरियड में
हंसते और हंसाते हैं
रोज़ देते हैं घर का काम
यदि कोई नहीं आता है
नोट कर लेते हैं उसका नाम

किसी से साग, किसी से लस्सी
किसी से मक्की की रोटी
मंगवाते हैं
कभी स्वटेर बुनते हैं
कभी गाने भी सुनते हैं
हमारे इंगलिश वाले टीचर!

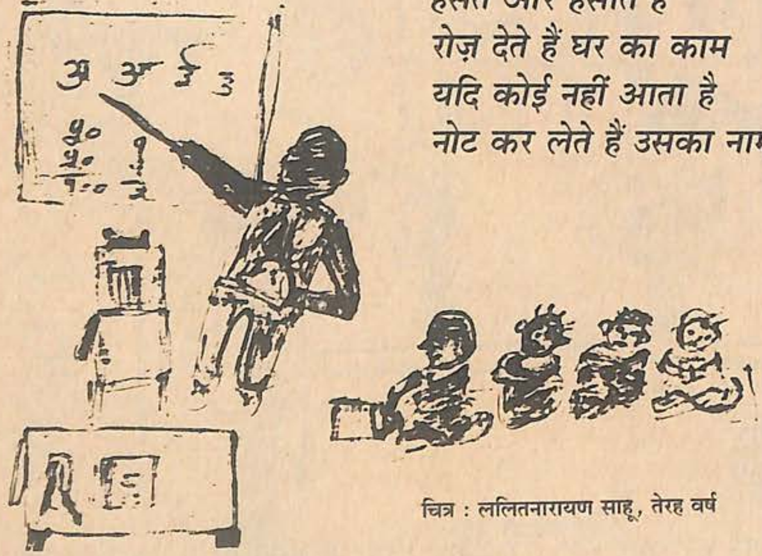

चित्र : ललितनारायण साहू, तेरह वर्ष

☐ कंवलदीप कौर, दसवीं, सनौर

बालचिरैया

मन बना है बालचिरैया
झूमें नाचे ता... ता... थैया

याद आया वो भोला बचपन
ज़िद्दी किंतु निर्मल-सा मन
हाय! कहां गए दिन वो मैया
मन बना है बाल चिरैया

पंख लगे वो सुंदर सपने
राम-रहीम सब थे अपने
ये आया कैसा ज़माना दैया
मन बना है बाल चिरैया

आओ हम सब एक हो जाएं
दूर घृणा का भाव भगाएं
आओ सखियों, आओ भैया
मन बना है बाल चिरैया!

☐ कुमारी वंदना, हरदा

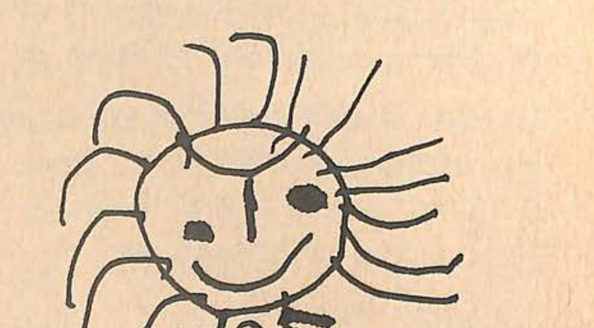

चित्र : दुलारी, चार वर्ष, पूना

सवालीराम

■ ***पेट में गड़गड़ाहट क्यों होती है और हम उल्टी क्यों करते हैं?***

□ गुर्र गुर्र गुर्र... हमारे पेट से आवाज़ें हमेशा निकलती रहती हैं। अपने दोस्त के पेट पर कान रखकर तुम इन आवाज़ों को साफ-साफ सुन भी सकते हो। कभी-कभी तो आवाज़ें बिना कान लगाए भी स्पष्ट सुनाई देती हैं—गड़गड़ाहट जैसी। असल में ये आवाज़ें पेट से नहीं बल्कि छोटी आंतों से आती हैं। मांसपेशियों के सिकुड़ने से जब तरल खाना आंतों में आगे बढ़ता है तब "फिस फिस" की आवाज़ें सुनाई देती हैं। ऐसी आवाज़ें गले में खाना निगलते समय भी उत्पन्न होती हैं।

गड़गड़ाहट गैस से उत्पन्न होती है। गैसों की कुछ मात्रा तो हम खाते वक्त ही निगलते हैं पर अधिकांश गैसें आंतों में ही पैदा होती हैं—पाचन की क्रिया में। आंतों में मौजूद बैक्टीरिया इन गैसों को उत्पन्न करते हैं। गैस की मात्रा खाद्य पदार्थ से भी तय होती है। फूल गोभी, पत्ता गोभी, सेम आदि खाने पर अधिक गैस उत्पन्न होती है। क्योंकि हम ऐसे पदार्थों को पूर्ण रूप से पचा नहीं पाते हैं। बैक्टीरिया अनपचे खाने पर वार करके विभाजित होने लगते हैं। बैक्टीरिया की संख्या जितनी बढ़ती है, गैस की मात्रा भी उतनी अधिक होती है।

कभी-कभी हमारा पाचन तंत्र हमसे चिढ़ जाता है। शायद हमने कोई अटपटी-चटपटी चीज़ खाई होगी। पाचन तंत्र उस अरुचिकर चीज़ को निकालकर आराम करना चाहता होगा। तभी उल्टी होती है। यानी, छोटी आंत अपनी सारी सामग्री को मलाशय से नहीं बल्कि मुंह से निकालती है।

पाचन तंत्र का चिड़चिड़ापन अन्य कारणों से भी पैदा हो सकता है, जैसे रोगाणुओं के विषों से। इसलिए उल्टी, पाचन तंत्र के तकलीफ का एक लक्षण है और शरीर का सुरक्षा साधन भी।

उल्टी करते समय छोटी आंतों की सारी सामग्री पेट में खाली हो जाती है। यह कोई मामूली काम नहीं है क्योंकि छोटी आंत 4 मीटर से अधिक लंबी होती है।

उल्टी में जो अजीब सी संवेदना महसूस होती है, वह आंतों की क्रिया से पैदा होती है। पेट की इस सारी प्रक्रिया में कोई मुख्य भूमिका नहीं हैं, सिवाय आराम की स्थिति में रहकर आंतों की सामग्री को स्वीकार करना। छोटी आंतों की मांसपेशियां सिकुड़ती हैं, मलाशय की ओर नहीं बल्कि पेट की ओर।

जब सारी सामग्री पेट में एकत्र होती है तब पेट की मांसपेशियां और डायफ्राम एक साथ ऊपर की तरफ धक्का मारते हैं और इस दबाव से पेट की सारी सामग्री मुंह द्वारा शरीर के बाहर निकलती है। मुंह में जो अजीब सा स्वाद रह जाता है वह पेट के रसायनों का स्वाद है।

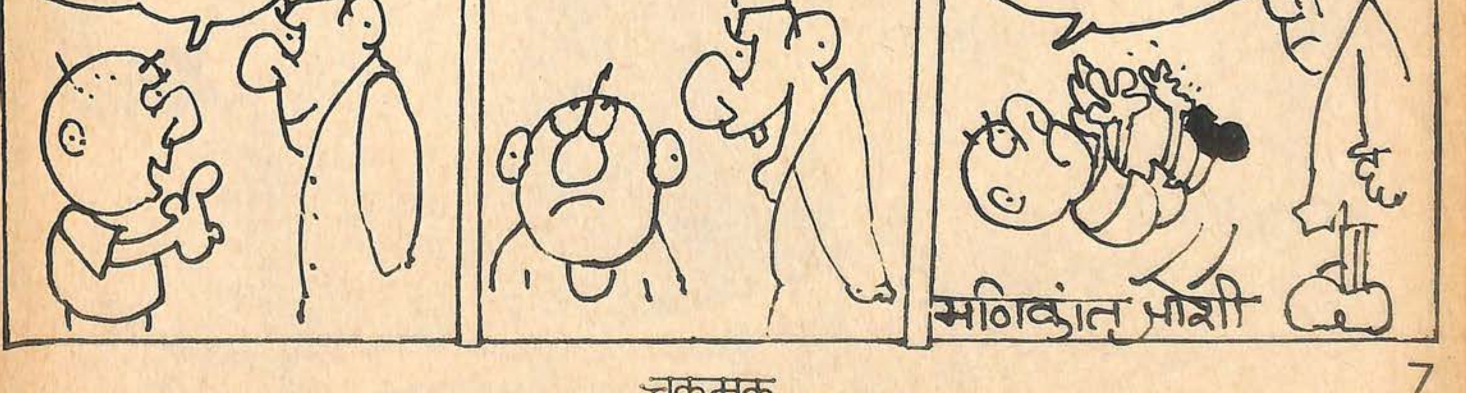

'वैज्ञानिक' शब्द सुनते ही मन में कैसी तस्वीर बनती है? शायद एक गंभीर सा, चश्मा लगाए गहरे सोच-विचार में खोए पुरुष की। किसी हंसमुख महिला का चेहरा तो इस शब्द के साथ कभी जुड़ ही नहीं पाता। भला ऐसा क्यों? तुम शायद कहो कि महिलाएं वैज्ञानिक होती ही नहीं हैं। पर वास्तव में ऐसी बात नहीं है। हां, यह सच है कि पुरुषों की तुलना में बहुत कम। पर इससे एक और सवाल उभरता है कि ऐसा क्यों? यह भी कतई सच नहीं है कि महिलाओं में बुद्धि या कौशल की कमी होती है। पर अकसर ऐसा कहा जाता है कि उनमें विज्ञान के प्रति रुचि नहीं होती। वास्तव में इन धारणाओं के पीछे सामाजिक कारणों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। बचपन से ही लड़की को घर-गृहस्थी के कामों में ज़्यादा डाला जाता है। उनके लिए घर-घूला या गुड्डा-गुड्डी के खेल ही उचित समझे जाते हैं। आमतौर पर हर बात का एक ही जवाब होता है, 'ऊंह, लड़की है! उसे तो आखिर किसी का घर ही संभालना है। बस घर-गृहस्थी की चीज़ें सीख ले। वही काम आएंगी।' दूसरी तरफ लड़कों को हर ऐसे काम में डाला जाता है जिन्हें वे करना चाहते हैं। चाहे फिर वह साइकिल चलाना हो या बिजली का फ्यूज़ ठीक करना। बिजली का फ्यूज़ ठीक करना लड़के के लिए एक आवश्यक प्रशिक्षण है और लड़की के लिए जान का खतरा! इसी तरह पढ़ाई या अन्य ऐसे कार्य जिनमें सोचने-समझने या दिमाग लगाने की बात है शुरू से ही लड़कों के लिए सुरक्षित रखे गए हैं। लड़कियों के पल्ले बस वही—घर का काम, बच्चों की देखभाल आदि।

तो जब समाज ने बचपन से ही ऐसा बंटवारा कर दिया है तो फिर भला लड़कियों को कहां मौका मिलेगा—वैज्ञानिक बनने का, कई साल सतत् पढ़ाई करने या शोध कार्य करने का। और फिर इन सब चीज़ों के लिए स्कूल और कॉलेजों की प्रयोगशाला, लायब्रेरी आदि में भी अतिरिक्त समय लगाना पड़ता है। इसके लिए सामाजिक बंधनों से मुक्ति आवश्यक है। आखिर घर से बाहर पढ़ने जाना, लड़कों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर देर तक काम करना, जल्दी ब्याही न जाना, घर के रोजमर्रा के कामों में परिवार के पुरुष सदस्यों का सहयोग चाहना, काम के सिलसिले में अकेले शहर से बाहर जाना, यात्रा करना—ये सभी बातें समाज के सामान्य रीति रिवाज़ों के विपरीत ही तो मानी जाती हैं।

वे महिलाएं जो इस ढर्रे से हटकर, स्वतंत्र होकर अपना विकास या काम कर पाईं, जिन्होंने सदियों से प्रतिबंधित पुरुषों की जागीरदारी में कदम रखने का साहस उठाया; सफल हुईं। मादाम क्यूरी भी ऐसी ही एक महिला है जिसने अनेकों रुकावटों को लांघकर विश्व में एक सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक के रूप में अपने को स्थापित किया। और दिखाया कि 'वैज्ञानिक' फ्रेम में एक प्यारा-सा हंसता हुआ भोला चेहरा भी अच्छी तरह फिट होता है।

इस अंक से हम मादाम क्यूरी के जीवन पर आधारित यह धारावाहिक शुरू कर रहे हैं। इसे हम पीपुल्स पब्लिशिंग हाऊस के सौजन्य से प्रकाशित कर रहे हैं।

रेडियम महिला

मारी क्यूरी

मान्या का बचपन

मान्या बेचारी को पता भी नहीं था कि चार साल पहले, यानी उसके जन्म के ठीक बाद, उसकी मां को तपेदिक ने धर दबाया था। यह बात सिर्फ घर के बड़े लोगों को मालूम थी।

मां अक्सर खांसती रहती। खांसते-खांसते कलेजा मुंह को आ जाता। मान्या दौड़ी-दौड़ी मां के पास जाती। मां के गले से लिपटकर अपना प्यार जताना चाहती। लेकिन मां चालाकी से किसी न किसी तरह उसे दूर हटा देती। तपेदिक तो छूत की बीमारी है न! मां को मान्या बहुत प्यारी थी। मां उसी को सबसे ज़्यादा चाहती थी। उसे इस तरह दूर करने में मां को कितना दुख होता होगा। लेकिन मान्या यह सब न जानती थी। मां उसे जानने भी न देती।

मान्या की तीन बहनें थीं और एक भाई। सबसे बड़ी बहन अभी सिर्फ बारह साल की थी। फिर भी, दूसरे भाई-बहनों के मुकाबले अपने को वह पुरखिन समझती थी। मान्या को लेकर वही घूमने निकलती। वही उसकी चौकसी करती।

उससे छोटा था भाई। नाम था जोजफ। अव्वल दर्ज़े का शरारती। क्या मज़ाल कि क्षण भर चुप होकर बैठ जाए। चुप बैठना तो मानो उसके लिए सज़ा थी। हां, पढ़ने-लिखने में उसका दिमाग बहुत तेज़ था।

मंझली बहन का नाम था ब्रोन्या। वह अभी पढ़ना-लिखना सीख ही रही थी।

तीसरी बहन का नाम था हेला। हेला और मान्या बस इधर-उधर खेलती-कूदती फिरतीं। कभी-कभी मान्या भी पढ़ने की इच्छा प्रकट करती। लेकिन मां और बापू कहते,

"बेटी! अभी तुम्हारी पढ़ने की उम्र नहीं है। अभी खाओ-खेलो।"

मान्या के बापू का नाम था व्लादिस्लाव स्क्लोडोव्स्की। एक स्कूल में मास्टर थे वह। मां, मादाम स्क्लोडोव्स्का, वारसा नगर की लड़कियों के प्रसिद्ध स्कूल की प्रधान् अध्यापिका रह चुकी थीं।

उन दिनों पोलैण्ड में शासन था रूस के ज़ार का। मतलब यह कि पोलैण्ड पराधीन था। पराधीन पोलैण्ड की स्त्रियां और भी पराधीन थीं। लड़कियों को पढ़ाने-लिखाने का रिवाज़ बहुत कम था। मान्या की मां जैसी कुछ इनी-गिनी उत्साही अध्यापिकाएं थीं जिनकी देख-रेख में लड़कियों के दो-चार स्कूल खुल गए थे। लेकिन कालेजों-विश्वविद्यालयों के द्वार उनके लिए अब भी बंद थे।

मादाम स्क्लोडोव्स्का को बेहद परिश्रम करना पड़ता। हेला, उनकी तीसरी बेटी, गोद में थी। स्कूल से सटे एक मकान में ये लोग रहते थे। स्कूल और मकान पास-पास थे। पति-पत्नी जोड़-तोड़ बैठाकर किसी तरह काम चला लेते।

1867 की 7 नवम्बर को मादाम स्क्लोडोव्स्का की गोद में एक नया शिशु खेलने लगा... नन्हीं-मुन्नी छोटी-सी बच्ची! मादाम स्क्लोडोव्स्का कल्पना भी नहीं कर सकती थीं कि यही भोली-भाली, बालिस्त बराबर बिटिया, एक दिन संसार के श्रेष्ठ वैज्ञानिकों में गिनी जाएगी।

1868 में व्लादिस्लाव स्क्लोडोव्स्की को मिली तरक्की। अब मकान बदलना उनके लिए ज़रूरी हो गया। मादाम स्क्लोडोव्स्का को स्कूल के निकट कोई घर नहीं मिला।

और, कुछ ही दिन बाद उन्हें तपेदिक ने धर दबाया। सुखी परिवार पर पहली बार दुख की कालिमा छा गई। मज़बूर होकर स्कूल का काम छोड़ना पड़ा। लेकिन वह खाली हाथ बैठने वाली स्त्री तो थीं नहीं! बच्चों की देख-भाल से जब भी फुर्सत मिलती वह लगे हाथ जूते की सिलाई का काम भी सीखती जातीं। ज़्यादा परिश्रम करना मना था। इसलिए घर पर बैठकर बच्चों के लिए वह मामूली किस्म के जूतों की सिलाई करती रहतीं।

अपने जन्म-काल से ही मान्या कुछ शब्द बराबर सुनती आई थी। ये शब्द थे, "रूस का ज़ार," "षड़यंत्र," "साइबेरिया," इत्यादि-इत्यादि।

पराधीन पोलैण्ड बार-बार सिर उठाकर खड़े होने का प्रयत्न करता। बार-बार पोलैण्ड विद्रोह करता। 1863 में तो पोलैण्ड की विद्रोही जनता, निहत्थी जनता, ताल ठोककर ज़ार का मुकाबला करने के लिए उठ खड़ी हुई थी। लेकिन जनता थी निहत्थी। ज़ार ने विद्रोही नेताओं को फांसी पर लटका दिया। सोचा, अब कभी जनता आज़ादी के रास्ते पर पांव बढ़ाने का साहस नहीं करेगी। स्कूल-कालेज, आफिस-दफ्तर, सब जगह कड़ा शासन कायम कर दिया गया।

जासूसों के गिरोह-के-गिरोह सिखा-पढ़ाकर तैयार किए जाने लगे। स्कूल के लड़के-लड़कियां रूसी भाषा छोड़ दूसरी सभी भाषाओं से घृणा करें—इसके लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था कर दी गई। पोलैण्ड में ऐसे लोगों की कमी न थी जो कमज़ोर स्वभाव के थे, जिन्हें देश के साथ गद्दारी करते, खुफिया पुलिस के रजिस्टर में अपना नाम लिखाते, शर्म न आती। देश की जनता इनके ऊपर थू-थू करती। स्कूलों में लुके-छिपे पोलिश भाषा में पोलैण्ड का इतिहास पढ़ाया जाता। अध्यापक-अध्यापिकाओं, लेखकों-कलाकारों, पादरी-पुरोहितों में अधिकांश लोग देश की स्वतंत्रता के पुजारी थे। ऐसे लोगों में ही थे मान्या के मां और बापू।

जिस स्कूल में मान्या के बापू पढ़ाते उसके प्रिंसिपल, मोशिये इवानोव थे, रूस के जासूस। सो मान्या के बापू और उनमें शुरू से ही झगड़ा होता रहता। मान्या के बापू जब भी प्रिंसिपल इवानोव को ज़ोर-ज़ुल्म करते देखते उनका विरोध करने से न चूकते। इवानोव गुस्से से दांत पीसता; गुर्राता; मौके की ताक में रहता। वह इस स्वाधीनता-प्रेमी देशभक्त को मज़ा चखाने की घातें सोचा करता।

मान्या थी अभी निरी बच्ची। उसके मन में ये बातें अलग ही अलग, ऊपर-ऊपर, तैरती रहतीं। उन्हें वह एक सूत्र में न पिरो पाती। कभी-कभी उसे प्रिंसिपल पर बड़ा गुस्सा आता। लेकिन बस। इससे ज़्यादा वह कुछ न समझ पाती। मान्या को अपने बापू सबसे अच्छे तब लगते जब वह अपने काम के कमरे में बैठकर चमचम करती कांच की आलमारी से तरह-तरह के साज-सामान, आले-औज़ार, निकालते और तरह-तरह से उन्हें हिलाते-डुलाते। बापू अपने काम में तन्मय हो जाते।

सो, एक दिन स्कूल का काम-काज खत्म कर बापू घर लौटे और अपने काम में जुट गए। तभी न जाने कहां से चुपके-चुपके मान्या उनके पास आ धमकी।

कौन?

मान्या। वह बापू के कान के पास मुंह ले जाकर बोली, "यह क्या है, बापू?" बापू ने चौंक कर आंखें उठाईं। क्षण भर उसकी ओर देखते रहे। फिर बोले "ये सब पदार्थ-विज्ञान के

आले-औज़ार हैं, बेटी!"

स्कूल से लौटकर, सरकारी काम-काज से छुट्टी पाकर, बापू पदार्थ-विज्ञान के साज-सामान को लेकर तरह-तरह के प्रयोग करते, तरह-तरह की खोजें करते। बापू के कांच के ये तरह-तरह के खिलौने मान्या को बड़े प्यारे लगते। गाने के सुर में वह गुन-गुनाने लगती,

"प... दा... र्थ... वि... ज्ञा... न! आ... ले... औ ... ज़ा ... र!"

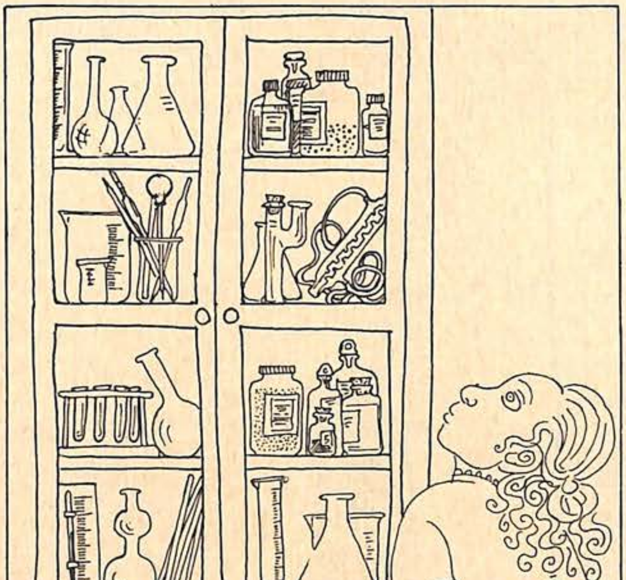

देखते-देखते मान्या बड़ी हुई। उसे भी अपने भाई-बहनों के साथ बापू के कमरे में बैठने और वहां बैठकर पढ़ने-लिखने की इजाज़त मिल गई। दबे गले से गुनगुन करती और पढ़ती हुई बीच-बीच में आंखें उठाकर वह अपने बापू की चमकती आलमारी को भी देख लेती। वह भी तो एक दिन इन औजारों से प्रयोग करना सीखेगी न!

अब स्कूल के रजिस्टर में मान्या का भी नाम लिख गया, "मारी स्क्लोडोव्स्का।"

दस साल की लड़की थी वह। अपनी क्लास में सबसे छोटी, लेकिन पढ़ने-लिखने में सबसे तेज़। एक बार जो कुछ सुन लेती; पढ़ लेती, उसे कभी न भूलती। किसी कविता को दो-चार बार अगर उसने पढ़ लिया तो फिर क्या है! बिना किताब देखे पूरी कविता सर्राटे से सुना देती। कुछ लोग सोचते कि मान्या ज़रूर चुपके-चुपके पढ़ती होगी। बड़ी तेज़ थी उसकी स्मरण-शक्ति।

"मारी स्क्लोडोव्स्का!"

"जी, अध्यापिका जी।"

"पोलैण्ड का इतिहास तो पढ़ा है न? बताओ तो स्तानिस्लास आगस्टस कौन था?"

"स्तानिस्लास आगस्टस 1764 में पोलैण्ड के राजा चुने गए थे। वह बड़े विद्वान और बुद्धिमान थे। उन्होंने अपने राज की कमज़ोरी और अन्दरूनी गड़बड़ी को समझा, लेकिन वह आवश्यक सुधार नहीं कर पाए। उनमें साहस की कमी थी...।"

पोलैण्ड का इतिहास ये लोग पोलिश भाषा में पढ़ते थे। और यह था बिल्कुल गैर-कानूनी काम। अध्यापिका अन्तोनिना तुपालस्का बड़ी लगन से और बड़े जतन से उन्हें पढ़ातीं। किसी क्रांतिकारी के समान ही उनका चेहरा निश्चल और गम्भीर था।

दस-बारह साल के कुछ बच्चे तुपालस्का को घेरे बैठे हैं। अध्यापिका उन्हें पढ़ा रही हैं। कुछ बच्चों की चमकती आंखें उन पर टिकी हैं। न जाने कब के, किस पुराने ज़माने के, राजा के गुण-दोषों की चर्चा हो रही है।

क्या-क्या गलतियां की थीं उस राजा ने? क्या-क्या अच्छाइयां थीं उसमें?

टन-टन टन-टन...

यकायक घंटा दो बार टनटना उठा। एक अजीब सी झनझनाहट हवा में गूंज उठी—दबी हुई, रुंधी हुई आवाज़ जैसी।

कमरे में मानो बिजली दौड़ गई। फौरन चार लड़कियां सारी किताबें बटोरकर न जाने किधर हवा हो गईं। देखते ही देखते वे फिर लौट आईं। कब गईं और कब आईं कुछ पता ही न चला। सब लड़कियों ने सिलाई के कपड़े हाथ में ले लिए। हरेक के हाथ में कपड़ा। कपड़े पर महीन-महीन बखिया किया जा रहा है। लेकिन सभी लड़कियों की सांस तेज़ है।

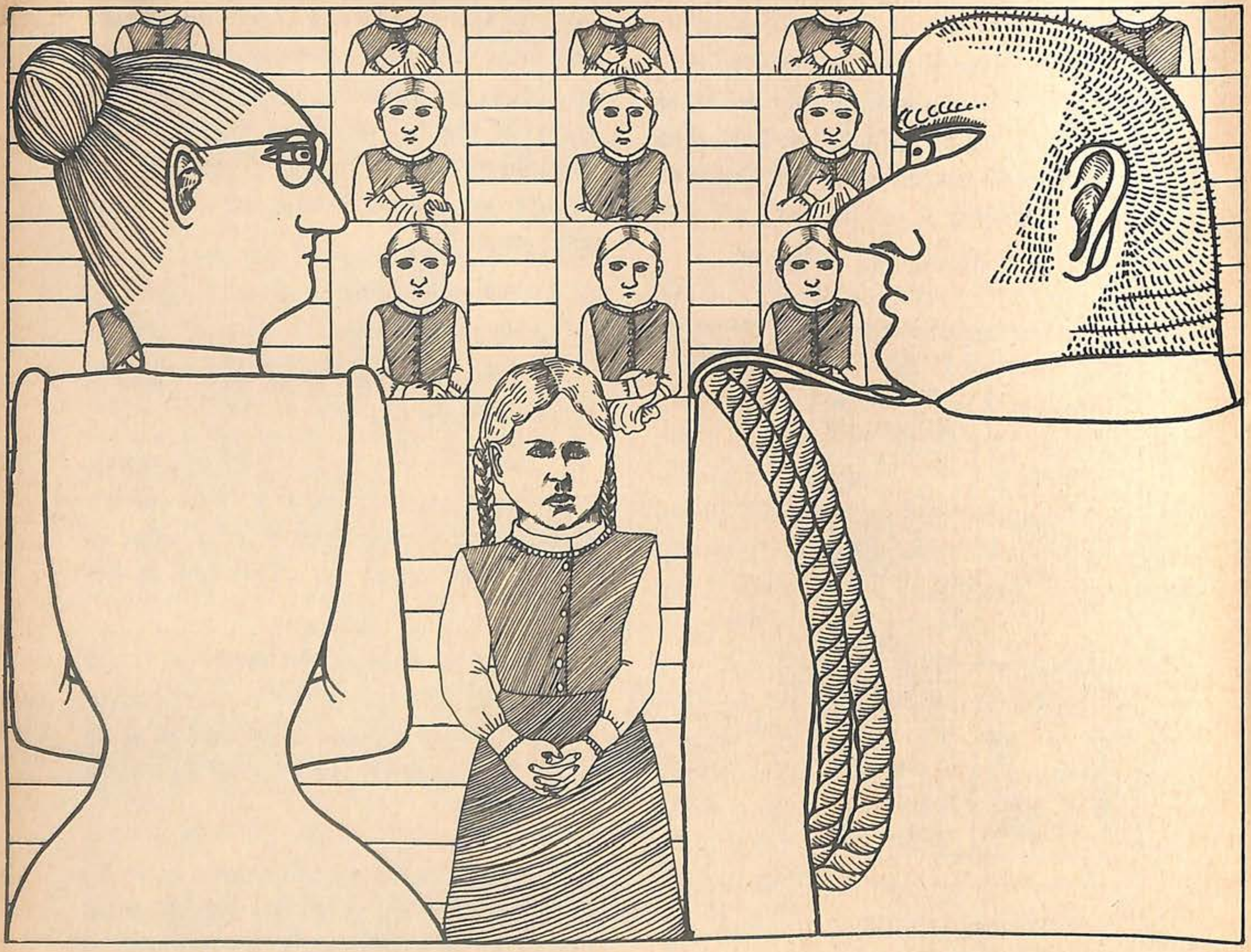

कमरे का दरवाज़ा खुला। मोशिये हार्नबर्ग ने अंदर पैर रखे। यही थे स्कूल के इंस्पेक्टर। चमकदार भड़कीली वर्दी। चमचमाते बटन। अंदर आकर उन्होंने पहले तो बड़े गौर से सब लड़कियों को देखा, फिर मानो धोखे से एक मेज़ की दराज़ खोली और उसमें झांका। नहीं, उसमें भी कोई किताब-कॉपी न थी।

हार्नबर्ग के साथ स्कूल की प्रधान अध्यापिका भी थीं। वह तो जैसे अपने इष्ट देव का सुमिरन कर रही थीं। हाय भगवान! पता नहीं चपरासी ने घंटा ठीक समय पर बजाया है या नहीं?

''ज़ोर-ज़ोर से आप क्या पढ़ा रही थीं?'' होंठ चबाते हुए हार्नबर्ग ने पूछा।

''आज से बच्चों को क्रिलोव की परियों की कहानियां सुनानी शुरू की हैं।'' शांत स्वर में तुपालस्का ने उत्तर दिया।

मान्या की छाती धक-धक करने लगी। क्लास की सबसे तेज़ लड़की वही थी न! सभी सरकारी मुआयनों में सबसे पहले उसी की पुकार होती थी।

''मारी स्क्लोडोव्स्का!''

नाम सुनते ही मान्या के चेहरे का रंग उड़ गया। बेचारी डरती-सहमती सामने आई।

पहले तो उससे रूसी भाषा में प्रार्थना बुलवाई गई। फिर प्रश्नों की झड़ी लगा दी गई। ''बताओ तो, पोलैण्ड का स्वामी कौन है?'' उत्तर था, ''रूस का पवित्र ज़ार।'' उत्तर देते-देते मान्या का चेहरा पीला पड़ चला। फिर भी हार्नबर्ग उसे किसी सवाल की लपेट में न ला सके।

हार्नबर्ग साहब बहुत खुश हुए। गज़ब की याददाश्त है इस लड़की की। उच्चारण भी कितना साफसुथरा! कौन कहेगा यह लड़की रूस में पैदा नहीं हुई!

आखिर किसी तरह यह दिल-दहलाऊ परीक्षा समाप्त हुई। हार्नबर्ग उठकर दूसरी कक्षा में चला गया।

तुपालस्का का गला भर आया। दोनों हाथ बढ़ाकर धीमी आवाज़ में उन्होंने पुकारा, "इधर आओ! इधर आओ प्यारी बेटी!"

मान्या पास खिसक आई। अब तक जो अपमान वह चुपचाप पी रही थी, वही आंसू बनकर आंखों से बरस पड़ा। झर-झर झर-झर आंसू बहने लगे।

घर हो या बाहर, सभी जगह बड़ी कठिन और पेचीदा समस्याएं सामने थीं। अपनी उम्र के लिहाज़ से मान्या सचमुच बहुत गम्भीर, सचमुच बहुत बड़ी, हो गई थी।

मां की बीमारी बढ़ती गई, बढ़ती गई, बहुत बढ़ गई। सुन्दर, बड़ी-बड़ी आंखें थीं उनकी, कान तक खिंची हुई। और, अब इन्हीं आंखों में नाच रही थी मृत्यु की छाया।

मां तो बीमार थीं ही, बापू की नौकरी भी चली गई। प्रिंसिपल इवानोव ने स्क्लोडोव्स्की की नौकरी छीन ली। लेकिन, मान्या के बापू को इससे दबाया तो जा नहीं सकता था। उन्होंने फिर एक छोटे-से स्कूल में नौकरी कर ली। मकान भी बदल लिया। दूसरे घर में रहने लगे। खाने-पीने और पढ़ाई के खर्च पर कुछ विद्यार्थियों को घर पर ही रख लिया।

घर की शांति जैसे नष्ट हो गई। पढ़ने-लिखने के कमरे में अब पहले जैसा शांत वातावरण कहां? लड़के खूब शोर मचाते। सारे घर को गंदा किए रहते। तो भी, आबहवा बदलने के लिए मान्या की मां को समुद्र किनारे जाना ही था। और समुद्र किनारे उन्हें भेजने के लिए बापू को खर्चे का प्रबंध करना ही था।

कहावत है, विपत्ति जब आती है तो अकेली नहीं आती। बापू के थे एक कुटुम्बी। इन कुटुम्बी महोदय ने रोज़गार में लगाने के नाम पर उनकी सारी कमाई स्वाहा कर दी। लड़कियों के विवाह में दहेज के लिए रुपए की बात तो दूर, लड़कियों को पढ़ाने-लिखाने के लिए भी पैसा पास न बचा।

और इसके कुछ ही दिनों बाद मान्या की बड़ी बहन जोशिया टाइफस की बीमारी में चल बसी। मान्या समझ भी न पाई कि बड़ी दीदी कहां चली गई है। एक धुंधला-सा खतरा, एक भारी-सा बोझ उसके मन पर छा गया। मान्या अपनी मां के मुंह को निहारती। लेकिन मां के मुंह को देखकर अपने को और भी असहाय पाती।

दस वर्ष की मान्या जीवन की कटु-कठोर विपदाओं से छुटकारा पाने के लिए जी-जान से पढ़ाई में जुट गई। पढ़ती वह गद्य, पद्य और परियों की कहानियां। स्कूल से पढ़कर लौटती तो फिर घर में किताबों की दुनिया में डूब जाती।

आहा! किताबों की दुनिया! वहां हार्नबर्ग नहीं! जोशिया दीदी की मौत नहीं! वहां दुख और अभाव नहीं! मां की बड़ी-बड़ी आंखों से झांकती मृत्यु की काली छाया नहीं!

गुलाम पोलैण्ड में उन दिनों पढ़ना-लिखना कोई आसान काम नहीं था। जो कुछ सीखना होता, रूसी भाषा में। जर्मन और फ्रान्सीसी भाषा सीखने की पुस्तकें भी रूसी भाषा में थीं। अपनी मातृभाषा में बच्चे साधारण लेख तक नहीं लिख सकते थे।

मान्या सभी को ताज्जुब में डाल देती। उसे देखकर सभी ताज्जुब में आ जाते। बात की बात में वह सब कुछ सीख लेती; जैसे जादू-मंतर जानती हो। रूसी कविताएं तो बात की बात में याद हो जातीं उसे। कभी कोई किताब लेकर बैठती तो उसे और किसी बात की सुध ही न रहती। सिर पर शोर-गुल मचता हो, मचता रहे। धमा-चौकड़ी मचती हो, मचती रहे! मान्या जब तक पढ़ना खत्म न कर लेती, अपनी जगह से न हिलती।

एक बार एक विचित्र घटना घटी।

मान्या बैठी पढ़ रही थी। बड़े ध्यान से कोई किताब पढ़ रही थी। कुछ और लड़के-लड़कियां भी वहां थे। उन्होंने सोचा, 'मान्या को चिढ़ाने की कोई तरकीब की जाए।

सो, वे पांच कुर्सियां लाए। चार कुर्सियां उन्होंने मान्या के चारों तरफ रख दीं। फिर, मान्या के सिर के ऊपर, उन्हीं कुर्सियों के सहारे, पांचवीं कुर्सी खड़ी कर दी।

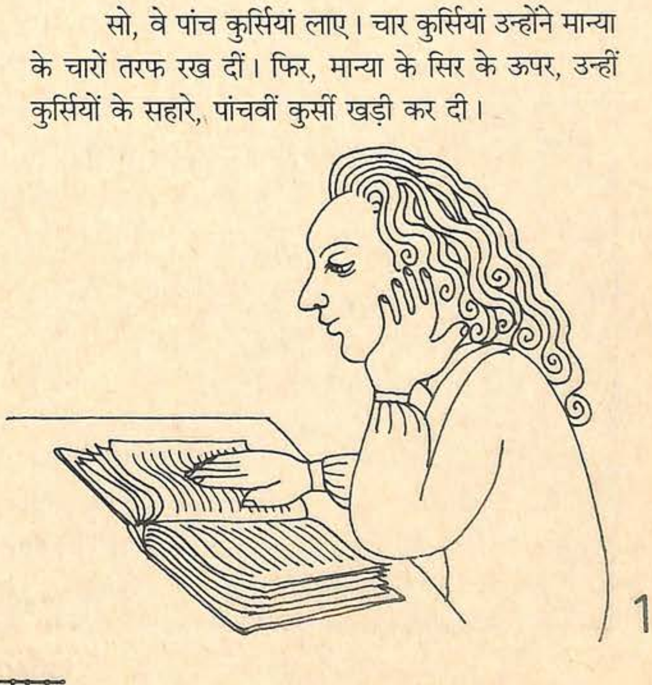

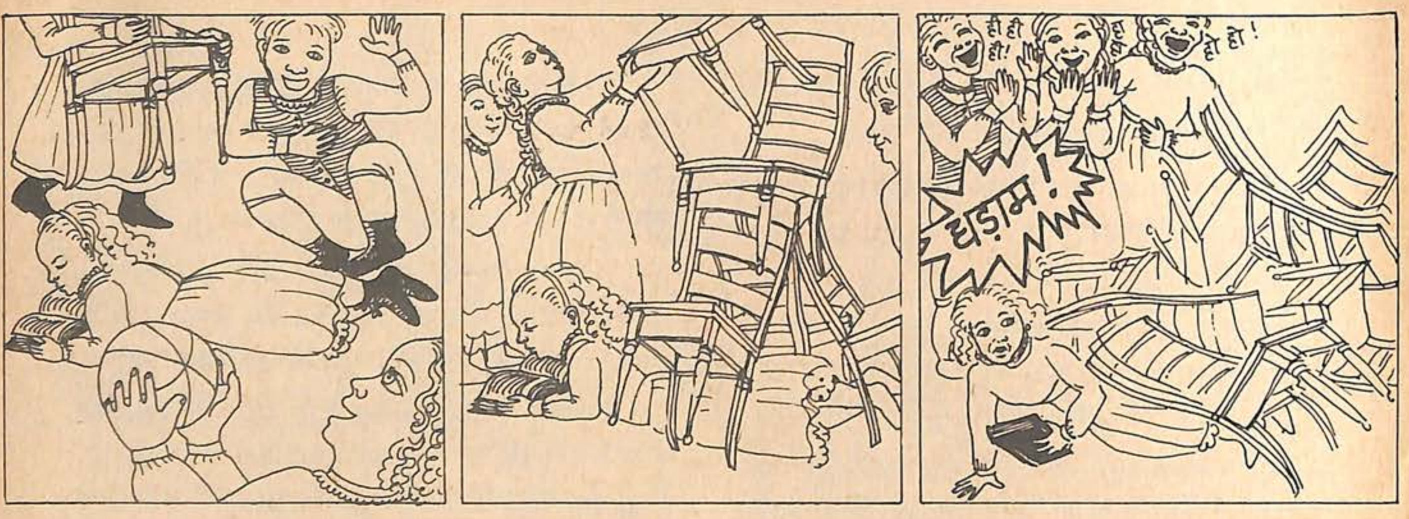

अब क्या था! लगे सब ज़ोर-ज़ोर से हंसने! लेकिन मान्या है कि उसे न कुर्सियों के स्तूप का ध्यान, न हंसी का, न शोर-गुल का। वह बस पढ़ने में मगन है।

पढ़ाई खत्म कर ज्यों ही वह उठी, कुर्सियों का स्तूप सिर के धक्के से भहराकर गिरा। छिल ही तो गया मान्या का कंधा। क्रोध से फुफकारती, पांव पटकती, वह पास वाले कमरे में चली गई।

जब भी मान्या पढ़ने बैठती, उसे दीन-दुनिया की खबर न रहती। वह मानो मंत्र के ज़ोर से अपने मन को खींचकर, समेटकर, पढ़ने बैठती।

और एक दिन वही हुआ, जिसका मान्या को डर था। मां मृत्यु शैय्या पर थीं। अपनी दुलारी मान्या को उन्होंने पास बुलाया। उसे आशीर्वाद दिया। आखिरी सांस छोड़ती हुई वह कह गई, तुम सब को मेरा प्यार!

मान्या का मन विद्रोह कर उठा! कितनी बार उसने भगवान से विनती की थी कि उसकी मां को अच्छा कर दें। लेकिन भगवान थे कि इतनी-सी भी विनती न सुनी। मनुष्य का इतना-सा भला न कर सके! फिर क्यों वह गिरजाघर जाए! क्यों पूजा-पाठ करे! नहीं, अब मान्या गिरजाघर नहीं जाएगी, नहीं जाएगी! मान्या विद्रोही है!

(अगले अंक में जारी)

लेखिका : गीता बंदोपाध्याय
बंगला से अनुवाद : त्रिभुवन नाथ   सभी चित्र : कैरन

पहेलियां

नहीं लगते इनके रोपे
बीज न इनके बोते हैं,
लेकिन फिर भी उगते रहते
सबके तन पर होते हैं!

□

घर के कोने में बैठी
हरदम बुनती रहती जाल,
लेकिन जाकर पकड़े मछली
कभी न आता उसको ख्याल!

□

एक कांच के गोले में
वह डाले रहता डेरा,
करे रात भर काम
और सो जाता देख सबेरा!

□

जब आ जाती है बरसात
टप-टप-टप करती बात,
दोस्त एक जो घूमे साथ
वह सर पर मैं पकड़ूं हाथ!

□ स्मिता द्विवेदी, नवमी, कुक्षी धार

नाचती बूंदें

तुमने आलू टिकिया ज़रूर खाई होगी। आलू टिकिया वाले का गरम तवा भी देखा होगा, जिस पर वह पटापट अपना करछुल उलटता-पलटता रहता है। तवे की गरमी को जांचने के लिए टिकिया वाला उस पर थोड़ा-सा पानी छिटकता है। पानी तुरंत वाष्प में नहीं बदलता है। बल्कि पानी की बूंदें थोड़ी देर तक तवे पर इधर-उधर नाचती रहती हैं। गरम प्रेस पर पानी की बूंदें डालने पर वे भी तुरंत लुप्त नहीं होतीं। आखिर क्यों?

तुम इस प्रयोग को करके देख सकते हो। अपने घर के तवे को चूल्हे पर रखकर गरम करो और उस पर थोड़ा पानी छिड़को।

आओ इसका कारण समझने का प्रयत्न करते हैं। जब बूंद गरम सतह पर पड़ती है तब उसके नीचे का थोड़ा पानी उबलकर वाष्प में बदल जाता है। यह वाष्प एक गद्दे की तरह काम करती है और बूंद को सतह से अलग रखती है। इसीलिए उसका पानी तुरंत उबलकर वाष्प में नहीं बदलता है। वाष्प के गद्दे के कारण बूंद और सतह के बीच घर्षण कम होने से बूंद आसानी से ढलान पर नाचती रहती है।

जो लोग जलती आग पर चलते हैं, उनके पैर न जलने का भी शायद यही कारण है। त्वचा का पानी वाष्प में बदलकर गद्दे के रूप में काम करने लगता है। हां, पैर न जलने का एक अन्य कारण भी है जो ताप के किसी अन्य माध्यम में प्रसार से संबंधित है।

एक में दो

कुछ दोस्त पिकनिक पर निकले। साथ में खाने-पीने की चीज़ें भी ले गए। जब घूम-फिर कर खाना खाने बैठे तो पता चला कि किसी ने एक ही बोतल में सिरका और तेल भर दिया है। समस्या थी कि दोनों को कैसे अलग किया जाए!

उनमें से एक को कुछ सूझा। उसने कहा, देखो अभी समस्या हल होती है। बोतल में दोनों पदार्थ अलग-अलग परतों में दिख रहे थे। नीचे सिरका था और ऊपर तेल की परत। जानते हो तेल ऊपर क्यों था? क्योंकि तेल का घनत्व सिरके से कम है। उस दोस्त ने बिना अधिक मेहनत किए एक दोस्त को सिरका दिया, दूसरे को तेल। सोचो कैसे?

तुम खुद यह प्रयोग करके देख सकते हो। एक बोतल में सिरका और तेल डालकर उसे खूब हिलाओ। बोतल को थोड़ी देर के लिए रख दो। कुछ समय बाद सिरका और तेल परतों में अलग हो जाएंगे। तेल ऊपर और सिरका नीचे। अब यदि तेल निकालना है तो बोतल खोलकर धीरे से तेल निकाल लो। यदि सिरका चाहिए तो बोतल को बंद करके उसे पलट दो। कुछ समय बाद सिरका बोतल के मुंह की तरफ भर जाएगा और तेल नीचे की तरफ। बस अब बोतल का ढक्कन खोलो और सिरका निकाल लो।

उड़ने जैसा महसूस करो

तुमने पक्षियों को उड़ते हुए देखकर कई बार सोचा होगा कि काश हम भी ऐसे उड़ पाते! आओ एक प्रयोग करते हैं जिसमें तुम उड़ोगे तो नहीं, हां उड़ने जैसा महसूस कर सकते हो।

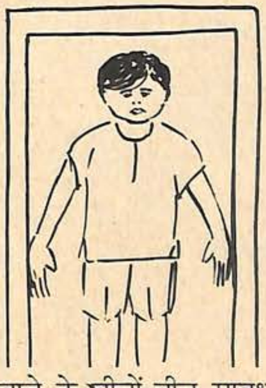

किसी दरवाज़े के बीचों-बीच सावधान की मुद्रा में खड़े हो जाओ। अब अपने हाथों को बगल से इतना उठाओ कि उल्टी हथेलियां दरवाज़े की चौखट को छूने लगें। बस अब उल्टी हथेलियों से चौखट पर दबाव डालो—मानो तुम चौखट को धका रहे हो। जब हाथ दर्द करने लगें (कम से से कम 45 सेकंड) तो वहां से हट जाओ। अरे यह क्या तुम्हारे दोनों हाथ अपने आप ऊपर की तरफ उठ रहे हैं। भला क्यों?

वास्तव में यह मस्तिष्क और मांसपेशियों के बीच संदेशों के संचार का मामला है। जब हम उल्टी हथेलियों से चौखट को धकाते हैं तो मस्तिष्क मांसपेशियों को तने रहने की आज्ञा देता है। जब हम चौखट छोड़कर बाहर आते हैं, तब भी कुछ क्षणों के लिए यही आज्ञा मांसपेशियों तक पहुंचती रहती है। इसीलिए हमारे हाथ अपने आप ऊपर की तरफ उठते हैं। जब नई स्थिति की जानकारी मस्तिष्क को मिलती है तब मांसपेशियों को तने रहने की आज्ञा जाना भी बंद हो जाती है।

अगर हमारे

अगर हमारे हाथ न होते
तो हम तुम क्या करते?
कैसे फूल तोड़ते, तितली
पकड़ पकड़ कर लाते?

कैसे कलम उठाकर अपनी
कापी पर लिख पाते?
कैसे हम कमरे में मोटर
चाबीदार चलाते?

कैसे रस गुल्ले चम्मच से
उठा उठाकर खाते?
अगर हमारे हाथ न होते
तो सचमुच क्या करते?

हम बकरी की तरह वनों में
घास पत्तियां चरते।

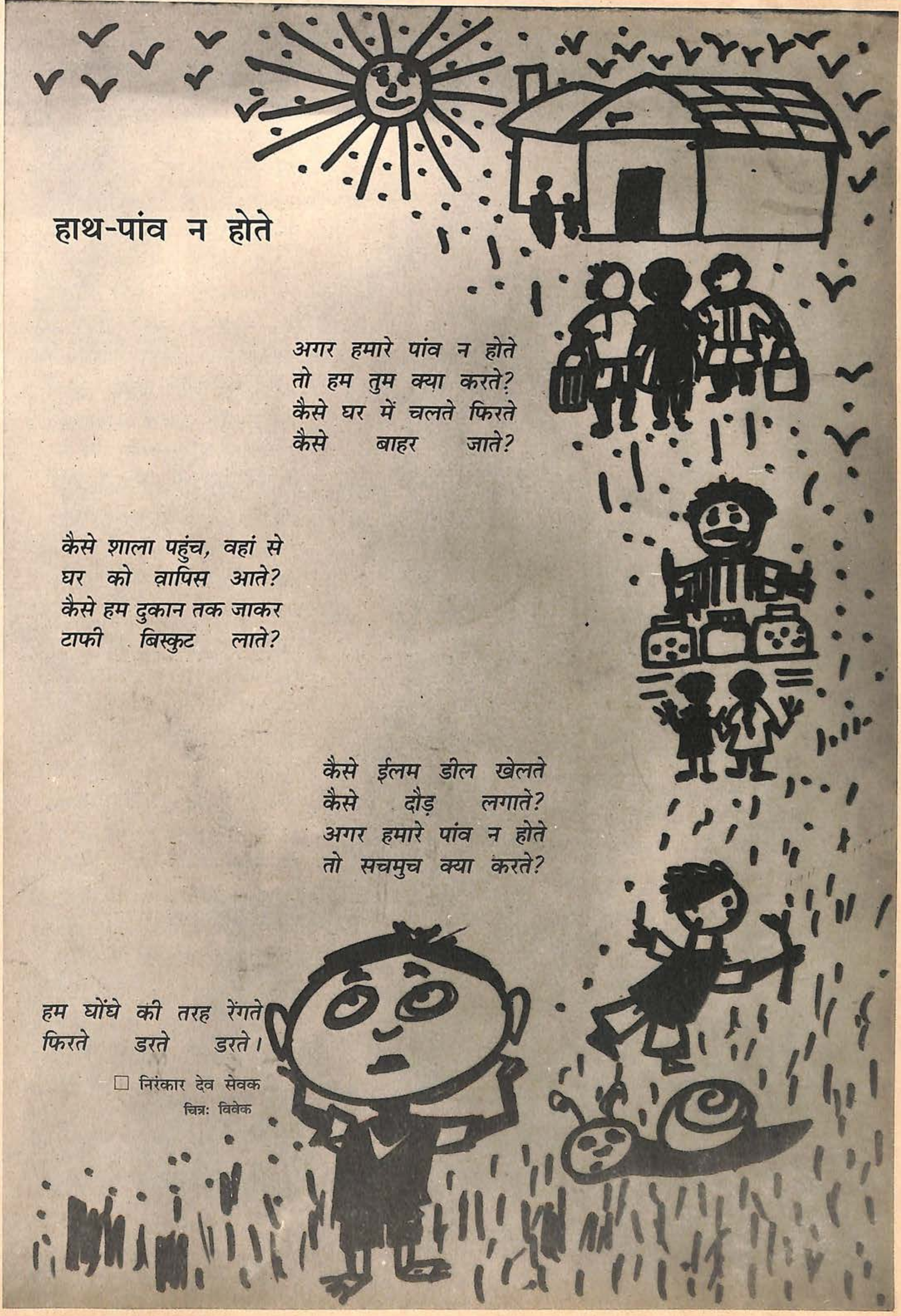

हाथ-पांव न होते

अगर हमारे पांव न होते
तो हम तुम क्या करते?
कैसे घर में चलते फिरते
कैसे बाहर जाते?

कैसे शाला पहुंच, वहां से
घर को वापिस आते?
कैसे हम दुकान तक जाकर
टाफी बिस्कुट लाते?

कैसे ईलम डील खेलते
कैसे दौड़ लगाते?
अगर हमारे पांव न होते
तो सचमुच क्या करते?

हम घोंघे की तरह रेंगते
फिरते डरते डरते।

□ निरंकार देव सेवक

चित्र: विवेक

पृथ्वी से आकाश तक
डोर बंधी विकास की!

फिर भी भूख से बेहाल है
क्यों यह दुनिया आज की?

तुम्हें तो मालूम है कि पिछले वर्ष कई स्वयं सेवी संस्थाओं ने, जिनमें एकलव्य भी शामिल था, मिलकर एक जन विज्ञान जत्था निकाला था। उद्देश्य तो केवल एक जत्था निकालकर चुपचाप बैठने का नहीं था। उम्मीद यह थी कि जत्थे से जगह-जगह जनविज्ञान में काम करने का माहौल बनेगा, उत्साह जगेगा। जत्थे के बाद इन संस्थाओं ने मिलकर **अखिल भारतीय जन विज्ञान नेटवर्क** बनाया। ताकि जनविज्ञान के कार्यक्रम, गतिविधियां बारहों महीने निरंतर चलती रहें।

इसी उद्देश्य से तय हुआ कि एक माह जनविज्ञान माह के रूप में मनाया जाए। और इस दौरान महीने भर जनविज्ञान की गतिविधियां जैसे वर्कशाप, स्लाईड शो, जत्थे, पोस्टर प्रदर्शनी इत्यादि का आयोजन हो। स्थानीय कार्यक्रमों में सहायता की दृष्टि से नेटवर्क ने पांच स्लाइड शो व एक पोस्टर प्रदर्शनी तैयार की है। इनकी प्रतियां पूरे देश में विभिन्न जनविज्ञान संस्थाओं में बांटी गई हैं। इस काम में सहयोग दिया है दिल्ली स्थित राष्ट्रीय विज्ञान व तकनालॉजी संचार परिषद् (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग) ने। उक्त स्लाइड शो में से एक **'हमारा भविष्य'** का कुछ अंश हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं।

स्लाइड शो बनाए हैं—पांडिचेरी साइंस फोरम ने।

मनुष्य ने प्रकृति को अपनी ज़रूरतों के हिसाब से बदला है और उसी से प्राप्त किए हैं—रोटी, कपड़ा और मकान। इसमें उसने विज्ञान की मदद भी ली है।

आस्ट्रेलिया और चीन जैसे देश प्रति हेक्टेयर 5 टन तक गेहूं या चावल उत्पादित कर सकते हैं। भारत में यह सिर्फ 1.8 टन प्रति हेक्टेयर ही है।

दुनिया भर में उपलब्ध स्रोतों से 1500 करोड़ व्यक्तियों के लिए भोजन जुटाया जा सकता है। फिलहाल 700 करोड़ व्यक्तियों के लिए भोजन उत्पादित किया जा रहा है—जबकि दुनिया की जनसंख्या सिर्फ 500 करोड़ है। **फिर भी दुनिया की आधी आबादी भूखी ही रह जाती है।**

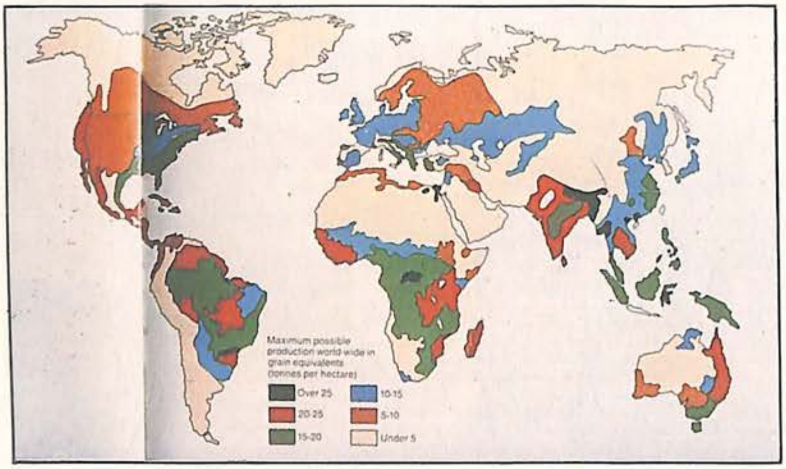

नई तकनीकों तथा जानकारी के आधार पर इस उत्पादन को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। दुनिया के इस नक्शे को देखने से पता चलता है कि भारत में यह उत्पादन दुनिया भर के और देशों से अधिक हो सकता है।

कपड़ों की बात करें तो हमारे पूर्वज पेड़ों की छाल और जानवरों की खाल से अपना तन ढकते थे।

फिर मानव ने सूत कातना और बुनना सीखा। और आज तो आधुनिक मिलों में तरह-तरह के कृत्रिम रेशों से कपड़ों का निर्माण होने लगा है।

दुनिया में कहीं भी इस तरह से नंगे रहने की आवश्यकता नहीं है—फिर ऐसा क्यों?

रहने को घर नहीं—सारा जहां हमारा! पता नहीं कितनी आबादी अपना पूरा जीवन सड़कों पर गुजार देती है।

जबकि हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सस्ते मकान बनाने की तकनीक और सुविधाएं उपलब्ध हैं।

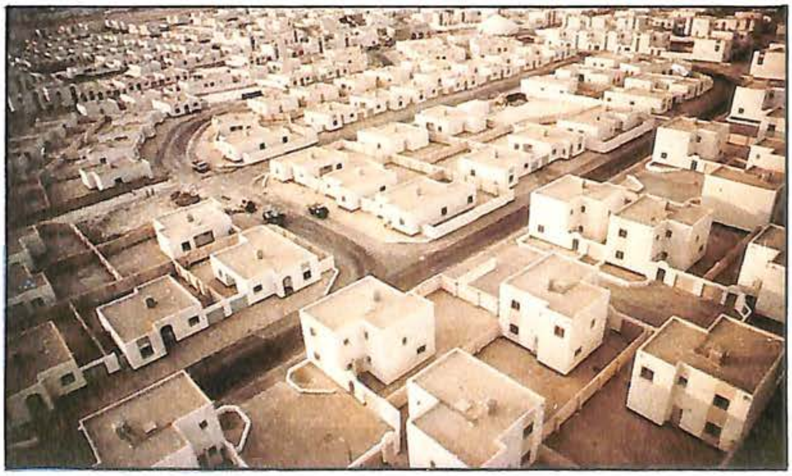

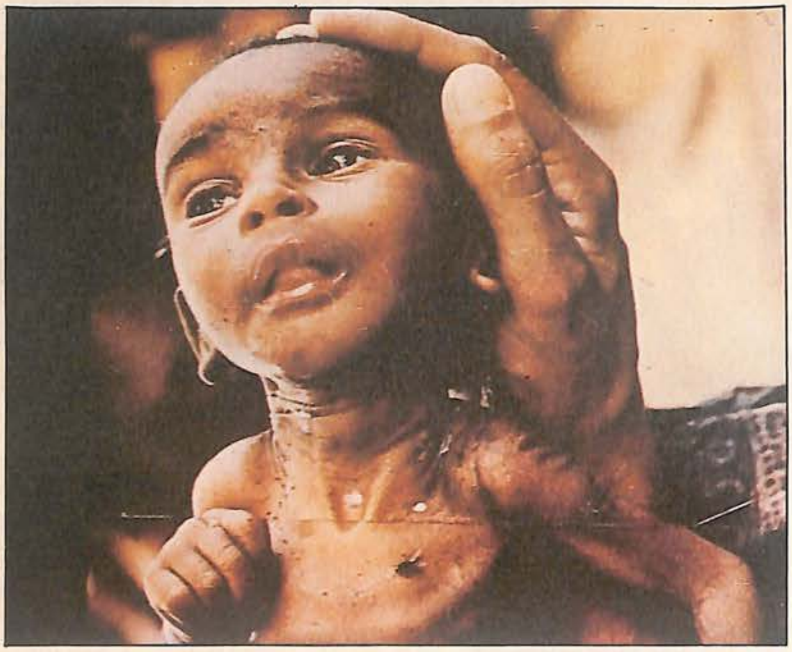

विकसित देश बड़ी संख्या में बीमारियों (महामारियों) का उन्मूलन कर चुके हैं। विकासशील देशों में भी ऐसा किया जा सकता है। **अगर इन देशों में पर्याप्त भोजन व साफ पानी उपलब्ध हो तो अधिकतर बीमारियां गायब हो जाएं।**

हमारी आबादी का बड़ा हिस्सा निरक्षर है।

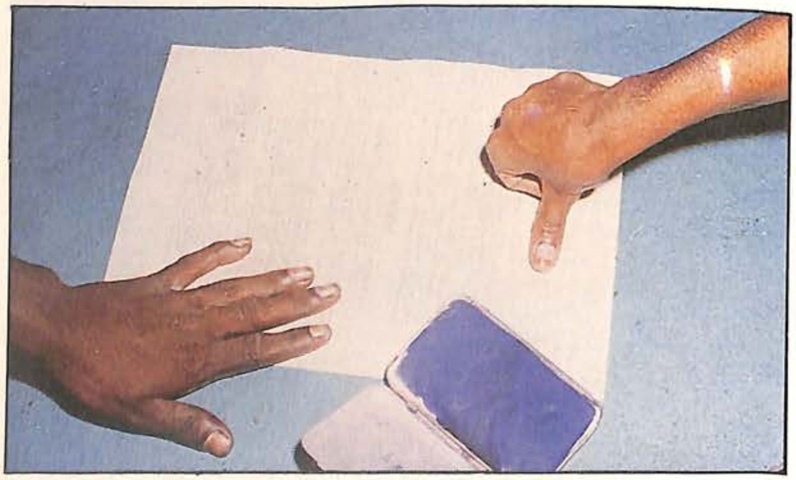

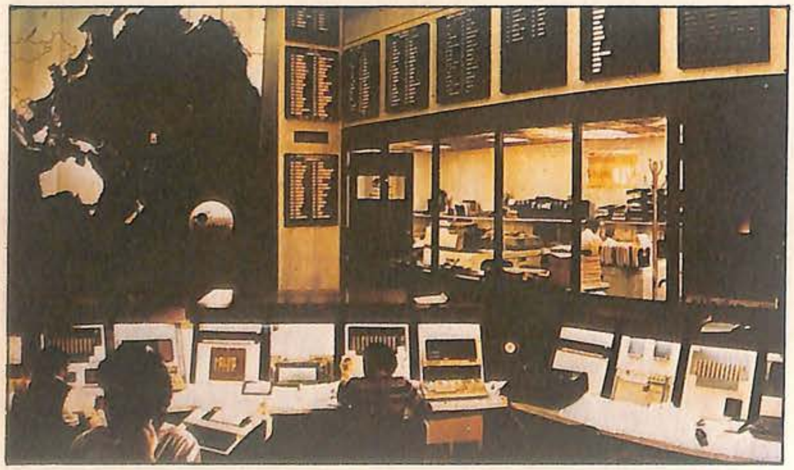

दूसरी तरफ संचार के आधुनिकतम तरीके इस्तेमाल किए जा रहे हैं। जैसे कम्प्यूटर, वीडियोफोन आदि।

आज यह स्थिति है कि भविष्य में मानव को जीवन की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बहुत कम समय लगाना होगा। मानव ने उन बंधनों को तोड़ दिया है जो पशुओं के लिए लागू होते हैं। और इस तरह वह पृथ्वी पर ही स्वर्ग बना सकता है। (चित्र में गेहूं के विशाल खेतों की मशीनों द्वारा कटाई दर्शाई गई है।)

अपनी ऊर्जा की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए सतत् स्रोतों का इस्तेमाल भी किया जा सकता है।

मनुष्य ने गुरुत्वाकर्षण की सीमाओं को भी तोड़ा है। चांद पर मानव के उतरने की कहानी तो पुरानी हो चुकी है। अंतरिक्ष में मानव नई-नई ऊंचाईयों को छू रहा है।

पर पृथ्वी की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। आधी से अधिक आबादी भुखमरी का शिकार है, और लगभग आधी अस्वस्थ और निरक्षर है। कहीं अकाल है और कहीं सूखा!

पर्यावरण निरंतर खराब हो रहा है। वायु में होने वाला प्रदूषण प्रमुख समस्या है।

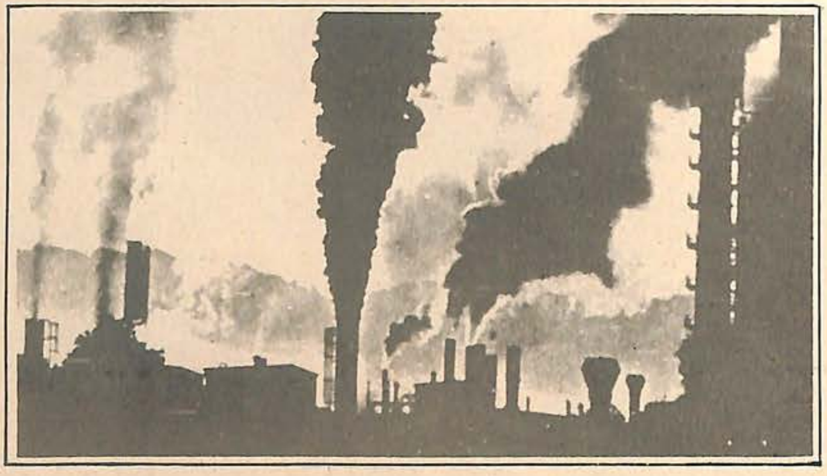

विकसित देशों की आधी से अधिक शक्ति और ऊर्जा अपनी सैन्यशक्ति को बढ़ाने में खर्च होती है। एक ट्राईडेंट पनडुब्बी की लागत से एक साल तक डेढ़ करोड़ बच्चों की पढ़ाई हो सकती है या पांच लाख घर बनाए जा सकते हैं।

आखिर हम युद्ध क्यों चाहते हैं? युद्ध को असंभव बनाया जाना चाहिए। कल इन बच्चों का भविष्य क्या होगा यह आज ही तय करना होगा (चित्र में जहाज़ ज़हरीले रसायन छोड़ रहे हैं)।

एक आत्मनिर्भर राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में देश ने प्रगति अवश्य की है। फिरभी हमें आयतित चीज़ों के मोह से छुटकारा पाना होगा। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के चंगुल से बचना होगा। हमारी किसी भी कमज़ोरी का फायदा ये युद्ध के व्यापारी उठा सकते है। यह ध्यान रखना भी ज़रूरी है कि आज जब सारी दुनिया पैसे के पीछे पागल हैं तब हम विदेशों से नई तकनीक के नाम पर मौत तो नहीं खरीद रहे हैं?

पर इसका मतलब यह नहीं है कि हम दूसरे देशों से संपर्क ही न रखें या विचारों का आदान-प्रदान ही न करें।

(शेष पिछले आवरण के भीतरी पृष्ठ पर)

दो गौरैयां

घर में हम तीन ही व्यक्ति रहते हैं—मां, पिताजी और मैं। पर पिताजी कहते हैं कि यह घर सराय बना हुआ है; हम तो जैसे यहां मेहमान हैं, घर के मालिक तो कोई दूसरे ही हैं।

आंगन में आम का पेड़ है। तरह-तरह के पक्षी उस पर डेरा डाले रहते हैं। जो भी पक्षी पहाड़ियों-घाटियों पर से उड़ता हुआ दिल्ली पहुंचता है, पिताजी कहते हैं, वही सीधा हमारे घर पहुंच जाता है, जैसे हमारे घर का पता लिखवाकर लाया हो! यहां कभी तोते पहुंच जाते हैं, तो कभी कौवे और कभी तरह-तरह की गौरैयां। वह शोर मचता है कि कानों के पर्दे फट जाएं, पर लोग कहते हैं कि पक्षी गा रहे हैं!

घर के अंदर भी यही हाल है। बीसियों तो चूहे बसते हैं। रात-भर एक कमरे के दूसरे कमरे में भागते फिरते हैं। वह धमाचौकड़ी मचती है कि हम लोग ठीक तरह से सो भी नहीं पाते। बर्तन गिरते हैं, डिब्बे खुलते हैं, प्याले टूटते हैं। एक चूहा अंगीठी के पीछे बैठना पसंद करता है; शायद बूढ़ा है, उसे सर्दी बहुत लगती है। एक दूसरा है जिसे बाथरूम की टंकी पर चढ़कर बैठना पसंद है। उसे शायद गर्मी बहुत लगती है। बिल्ली हमारे घर में रहती तो नहीं, मगर घर उसे भी पसंद है, और वह कभी-कभी झांक जाती है, मन आया तो अंदर आकर दूध पी गई, न मन आया तो बाहर से ही 'फिर आऊंगी' कहकर चली जाती है। शाम पड़ते ही दो-तीन चमगादड़ कमरों के आर-पार पर फैलाए कसरत करने लगते हैं। घर में कबूतर भी हैं। दिन-भर 'गुटर-गूं गुटर-गूं' का संगीत सुनाई देता रहता है। इतने पर ही बस नहीं, घर में छिपकलियां भी हैं और बर्रें भी हैं और चींटियों की तो जैसे फौज ही छावनी डाले हुए है।

अब एक दिन दो गौरैयां सीधी अंदर घुस आईं, और बिना पूछे उड़-उड़कर मकान देखने लगीं। पिताजी कहने लगे कि मकान का निरीक्षण कर रही हैं कि उनके रहने योग्य है या नहीं। कभी वे किसी रोशनदान पर जा बैठतीं, तो कभी खिड़की पर। फिर जैसे आईं थीं वैसे ही उड़ भी गईं। पर दो दिन बाद हमने क्या देखा कि बैठक की छत में लगे पंखे के गोले में उन्होंने अपना बिछावन बिछा लिया है, और सामान भी ले आई हैं और मजे से दोनों बैठी गाना गा रही हैं। जाहिर है, उन्हें घर पसंद आ गया था।

मां और पिताजी दोनों सोफे पर बैठे उनकी ओर देखे जा रहे थे। थोड़ी देर बाद मां सिर हिलाकर बोलीं, "अब तो ये नहीं उड़ेंगी। पहले इन्हें उड़ा देते, तो उड़ जातीं। अब तो इन्होंने यहां घोंसला बना लिया है।"

इस पर पिताजी को गुस्सा आ गया। वह उठ खड़े हुए और बोले, "देखता हूं ये कैसे यहां रहती हैं! गौरैयां मेरे आगे क्या चीज़ हैं! मैं भी जात का खत्री हूं, अभी निकाल बाहर करता हूं।"

"छोड़ो जी, चूहों को तो निकाल नहीं पाए, अब चिड़ियों को निकालेंगे!" मां ने व्यंग्य से कहा।

मां कोई बात व्यंग्य में कहें, तो पिताजी उबल पडते हैं वह समझते हैं कि मां उनका मजाक उड़ा रही हैं। वह फौरन उठ खड़े हुए और पंखे के नीचे जाकर जोर से ताली बजाई और मुंह से 'श...शू' कहा, बांहें झुलाईं, फिर खड़े-खड़े कूदने लगे, कभी बाहें झुलाते, कभी 'श...शू' करते।

गौरैयों ने घोंसले में से सिर निकालकर नीचे की ओर झांककर देखा और दोनों एक साथ 'चीं-चीं करने लगीं। और मां खिलखिलाकर हंसने लगीं।

पिताजी को गुस्सा आ गया, "इसमें हंसने की क्या बात है?"

मां को ऐसे मौकों पर हमेशा मज़ाक सूझता है। हंसकर बोलीं, "चिड़ियां एक दूसरी से पूछ रही हैं कि यह आदमी कौन है और नाच क्यों रहा है?"

तब पिताजी को और भी ज़्यादा गुस्सा आ गया और वह पहले से भी ज़्यादा ऊंचा कूदने लगे।

गौरैयां घोंसले में से निकलकर दूसरे पंखे के डैने पर जा बैठीं। उन्हें पिताजी का नाचना जैसे बहुत पसंद आ रहा था। मां फिर हंसने लगीं, "ये निकलेंगी नहीं, जी। अब इन्होंने अंडे दे दिए होंगे।"

"निकलेंगी कैसे नहीं?" पिताजी बोले और बाहर से लाठी उठा लाए। इसी बीच गौरैयां फिर घोंसले में जा बैठी थीं। उन्होंने लाठी ऊंची उठाकर पंखे के गोले को ठकोरा। 'चीं-चीं' करती गौरैयां उड़कर पर्दे के डंडे पर जा बैठीं।

"इतनी तकलीफ करने की क्या ज़रूरत थी। पंखा चला देते, तो ये उड़ जातीं।" मां ने हंसकर कहा।

पिताजी लाठी उठाए पर्दे के डंडे की ओर लपके। एक गौरैया उड़कर किचन के दरवाज़े पर जा बैठी। दूसरी सीढ़ियोंवाले दरवाज़े पर।

मां फिर हंस दीं, "तुम तो बड़े समझदार हो जी, सभी दरवाज़े खुले हैं और तुम गौरैयों को बाहर निकाल रहे हो। एक दरवाज़ा खुला छोड़ो, बाकी दरवाज़े बंद कर दो। तभी ये निकलेंगी।"

अब पिताजी ने मुझे झिड़ककर कहा, "तू खड़ा क्या देख रहा है? जा, दोनों दरवाजे बंद कर दे!"

मैंने भागकर दोनों दरवाज़े बंद कर दिए। केवल किचनवाला दरवाज़ा खुला रहा।

पिताजी ने फिर लाठी उठाई और गौरैयों पर हमला बोल दिया। एक बार तो झूलती लाठी मां के सिर पर लगते-लगते बची। 'चीं-ची' करती चिड़ियां कभी एक जगह तो कभी दूसरी जगह जा बैठतीं। आखिर दोनों किचन की ओर खुलनेवाले दरवाज़े में से बाहर निकल गईं। मां तालियां बजाने लगीं। पिताजी ने लाठी दीवार के साथ टिकाकर रख दी और छाती फैलाए कुर्सी पर आ बैठे।

"आज दरवाज़े बंद रखो," उन्होंने हुक्म दिया। "एक दिन अंदर नहीं घुस पाएंगी, तो घर छोड़ देंगी।"

तभी पंखे के ऊपर से 'चीं-चीं' की आवाज़ सुनाई पड़ी। और मां खिलखिलाकर हंस दीं। मैंने सिर उठाकर ऊपर की ओर देखा, दोनों गौरैयां फिर से अपने घोंसले में मौजूद थीं।

"दरवाज़े के नीचे से आ गई हैं," मां बोलीं।

मैंने दरवाज़े के नीचे देखा। सचमुच दरवाज़ों के नीचे थोड़ी-थोड़ी जगह खाली थी।

पिताजी को फिर गुस्सा आ गया। मां मदद तो करती नहीं थीं, बस, बैठी हंसे जा रही थीं।

अब तो पिताजी गौरैयों पर पिल पड़े। उन्होंने दरवाज़ों के नीचे कपड़े ठूंस दिए ताकि कहीं कोई छेद बचा नहीं रह जाए। और फिर लाठी झुलाते हुए उन पर टूट पड़े। चिड़ियां 'चीं-चीं' करतीं फिर बाहर निकल गईं, पर थोड़ी ही देर बाद वे फिर कमरे में मौजूद थीं। अबकी बार वे रोशनदान में से आ गईं थीं जिसका एक शीशा टूटा हुआ था।

"देखो-जी, चिड़ियों को मत निकालो," मांने अबकी बार गम्भीरता से कहा, "अब तो इन्होंने अंडे भी दे दिए होंगे। अब ये यहां से नहीं जाएंगी।"

"क्या मतलब? मैं कालीन बरबाद करवा लूं?" पिताजी बोले। और कुर्सी पर चढ़कर रोशनदान में कपड़ा ठूंस दिया, और फिर लाठी झुलाकर एक बार फिर चिड़ियों को

खदेड़ दिया। दोनों पिछले आंगन की दीवार पर जा बैठीं।

इतने में रात पड़ गई। हम खाना खाकर ऊपर जाकर सो गए। जाने से पहले मैंने आंगन में झांककर देखा, चिड़ियां वहां पर नहीं थीं। मैंने समझ लिया कि उन्हें अक्ल आ गई होगी। अपनी हार मानकर किसी दूसरी जगह चली गई होंगी।

दूसरे दिन इतवार था। जब हम लोग नीचे उतरकर आए, तो वे फिर से मौज़ूद थीं और मज़े से बैठी मल्हार गा रही थीं। पिताजी ने फिर लाठी उठा ली। उस दिन उन्हें गौरैयों को बाहर निकालने में बहुत देर नहीं लगी।

अब तो रोज यही कुछ होने लगा। दिन में तो वे बाहर निकाल दी जातीं, पर रात के वक्त जब हम सो रहे होते, तो न जाने किस रास्ते से वे अंदर घुस आतीं।

पिताजी परेशान हो उठे। आखिर कोई कहां तक लाठी झुला सकता है? पिताजी बार-बार कहें, "मैं हार माननेवाला आदमी नहीं हूं। मैं जात का खत्री हूं।" पर आखिर वह भी तंग आ गए थे। आखिर जब उनकी सहनशीलता चुक गई, तो वह कहने लगे कि वह गौरैयों का घोंसला नोचकर निकाल देंगे। और वह फौरन ही बाहर से एक स्टूल उठा लाए।

घोंसला तोड़ना कठिन काम नहीं था। उन्होंने पंखे के नीचे फर्श पर स्टूल रखा, और लाठी लेकर स्टूल पर चढ़ गए। "किसी को सचमुच बाहर निकालना हो, तो उसका घर तोड़ देना चाहिए," उन्होंने गुस्से से कहा।

घोंसले में से अनेक तिनके बाहर की ओर लटक रहे थे, गौरैयों ने सजावट के लिए मानो झालर टांग रखी हो। पिताजी ने लाठी का सिरा सूखी घास के तिनकों पर जमाया और दाईं ओर को खींचा। दो तिनके घोंसले में से अलग हो गए और फरफराते हुए नीचे उतरने लगे।

"चलो, दो तिनके तो निकल गए!" मां हंसकर बोलीं, "अब बाकी दो हज़ार भी निकल जाएंगे!"

तभी मैंने बाहर आंगन की ओर देखा और मुझे दोनों गौरैयां नज़र आईं। दोनों चुपचाप दीवार पर बैठी थीं। इस बीच दोनों कुछ-कुछ दुबला गई थीं, कुछ-कुछ काली पड़ गई थीं। अब वे चहक भी नहीं रही थीं।

अब पिताजी लाठी का सिरा घास के तिनकों के ऊपर रखकर वहीं रखे-रखे घुमाने लगे। इससे घोंसले के लंबे-लंबे तिनके लाठी के सिरे के साथ लिपटने लगे। वे लिपटते गए, लिपटते गए, और घोंसला लाठी के इर्द-गिर्द खिंचता चला आने लगा। फिर वह खिंच-खिंचकर लाठी के सिरे के इर्द-गिर्द लपेटा जाने लगा। सूखी घास और रूई के फाहे, और धागे और थिगलियां लाठी के सिर पर लिपटने लगीं। तभी सहसा ज़ोर की आवाज़ आई, "चीं-चीं, चीं-चीं!!!"

पिताजी के हाथ ठिठक गए। यह क्या? क्या गौरैयां लौट आई हैं? मैंने झट से बाहर की ओर देखा। नहीं, दोनों गौरैयां बाहर दीवार पर गुमसुम बैठी थीं।

"चीं-चीं, चीं-चीं!" फिर आवाज़ आई। मैंने ऊपर देखा। पंखे के गोले के ऊपर से दो नन्ही-नन्ही गौरैयां सिर निकाले नीचे की ओर देख रही थीं और चीं-चीं किए जा रही थीं। अभी भी पिताजी के हाथ में लाठी थी और उस पर लिपटा घोंसले का बहुत-सा हिस्सा था।

नन्ही-नन्ही दो गौरैयां! वे अभी भी झांके जा रही थीं और चीं-चीं करके मानो अपना परिचय दे रही थीं, "हम आ गई हैं! हमारे मां-बाप कहां हैं?"

मैं अवाक् उनकी ओर देखता रहा। फिर मैंने देखा, पिताजी स्टूल पर से नीचे उतर आए हैं। और घोंसले के तिनकों में से लाठी निकालकर उन्होंने लाठी को एक ओर रख दिया है और चुपचाप कुर्सी पर आकर बैठ गए हैं। इस बीच मां कुर्सी पर से उठीं और सभी दरवाज़े खोल दिए। नन्ही चिड़ियां अभी भी हांफ-हांफकर चिल्लाए जा रही थीं और अपने मां-बाप को बुला रही थीं।

उनके मां-बाप झट-से उड़कर अंदर आ गए, और चीं-चीं करते उनसे जा मिले और उनकी नन्ही-नन्ही चोंचों में चुग्गा डालने लगे। मां और पिताजी और मैं उनकी ओर देखते रह गए। कमरे में फिर से शोर होने लगा था, पर अबकी बार पिताजी उनकी ओर देख-देखकर केवल मुस्कराते रहे।

सभी चित्र : अक्षय चराटे

□ भीष्म साहनी

एक अलग दुनिया...

बंद और सुरक्षित

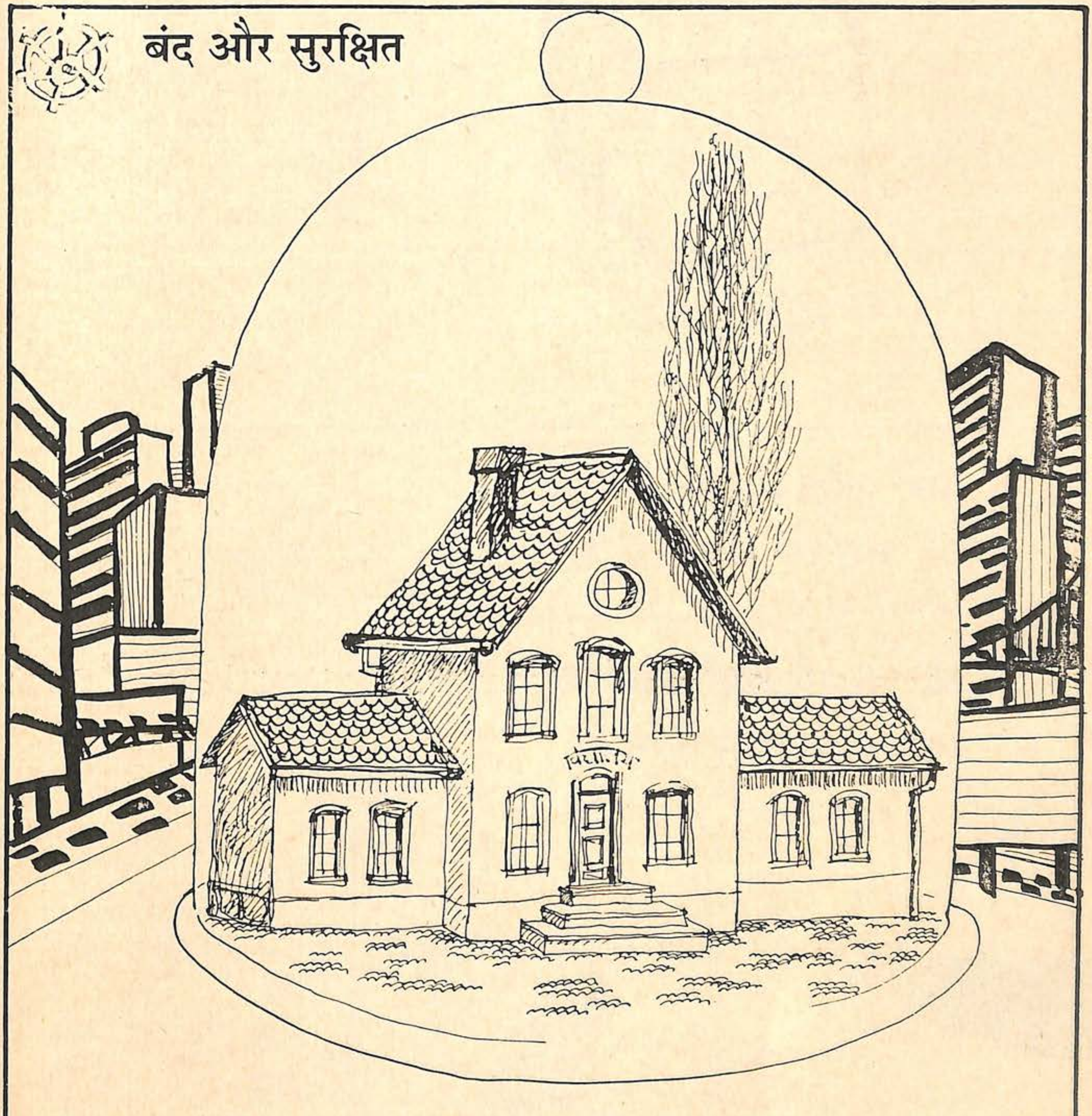

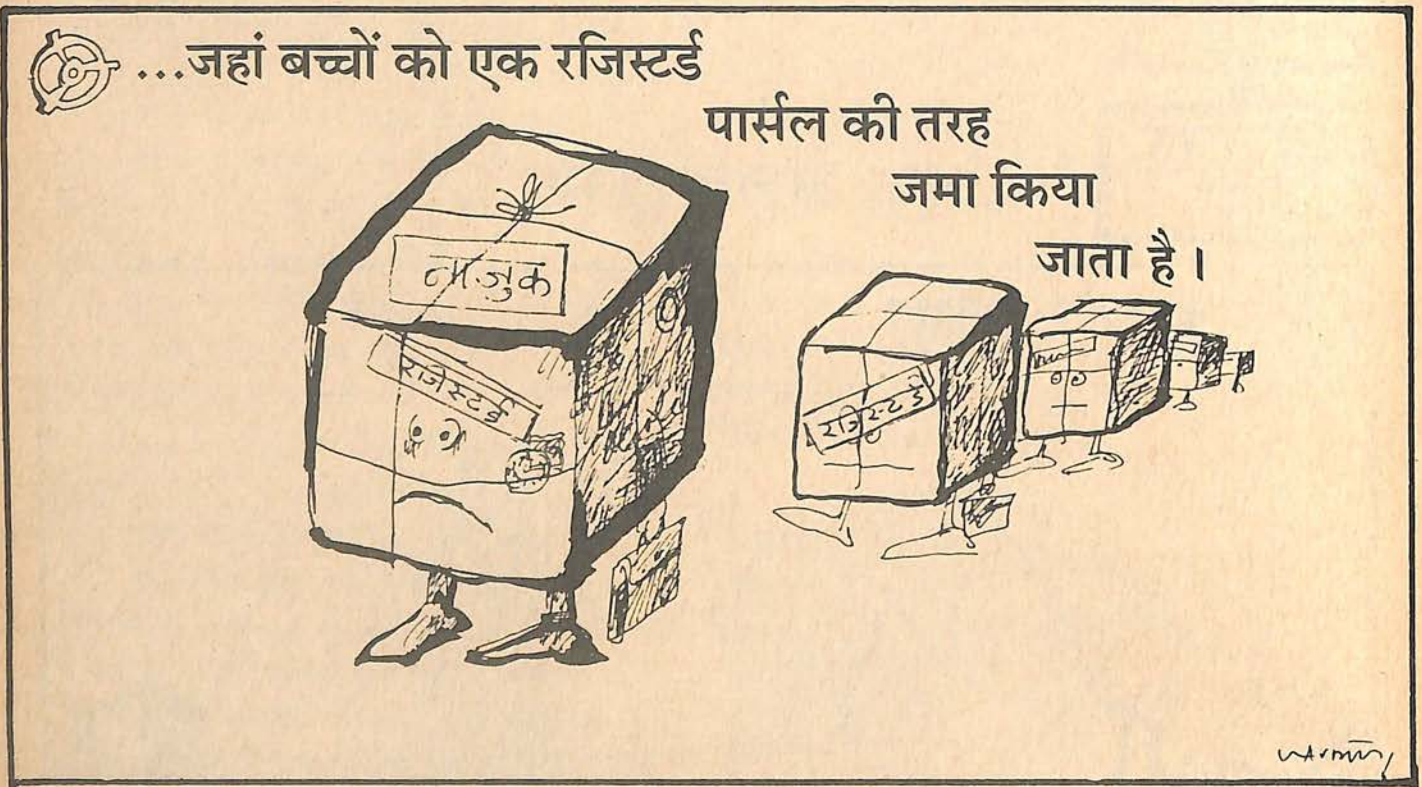
...जहां बच्चों को एक रजिस्टर्ड
पार्सल की तरह
जमा किया
जाता है।
नाज़ुक
रजिस्टर्ड

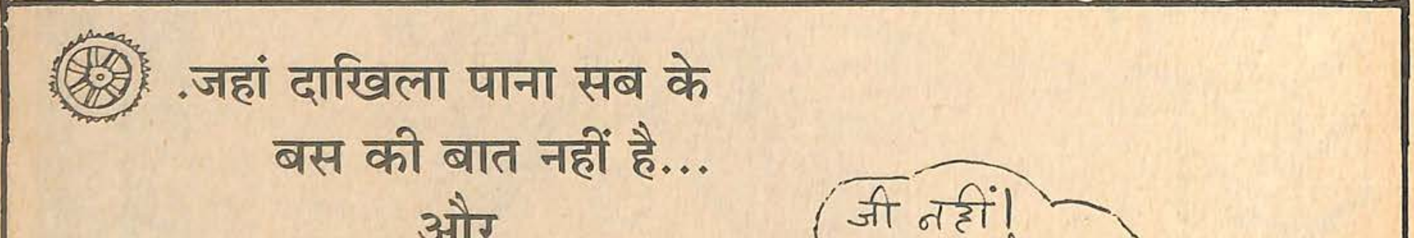
.जहां दाखिला पाना सब के
बस की बात नहीं है...
और
पालक भी अपने आप को
परदेसी महसूस करते हैं...
हम प्रवेश कर सकते हैं?
जी नहीं! यहां अजनबी प्रवेश नहीं कर सकते...!
पालक

...ज़िंदगी से जुदा

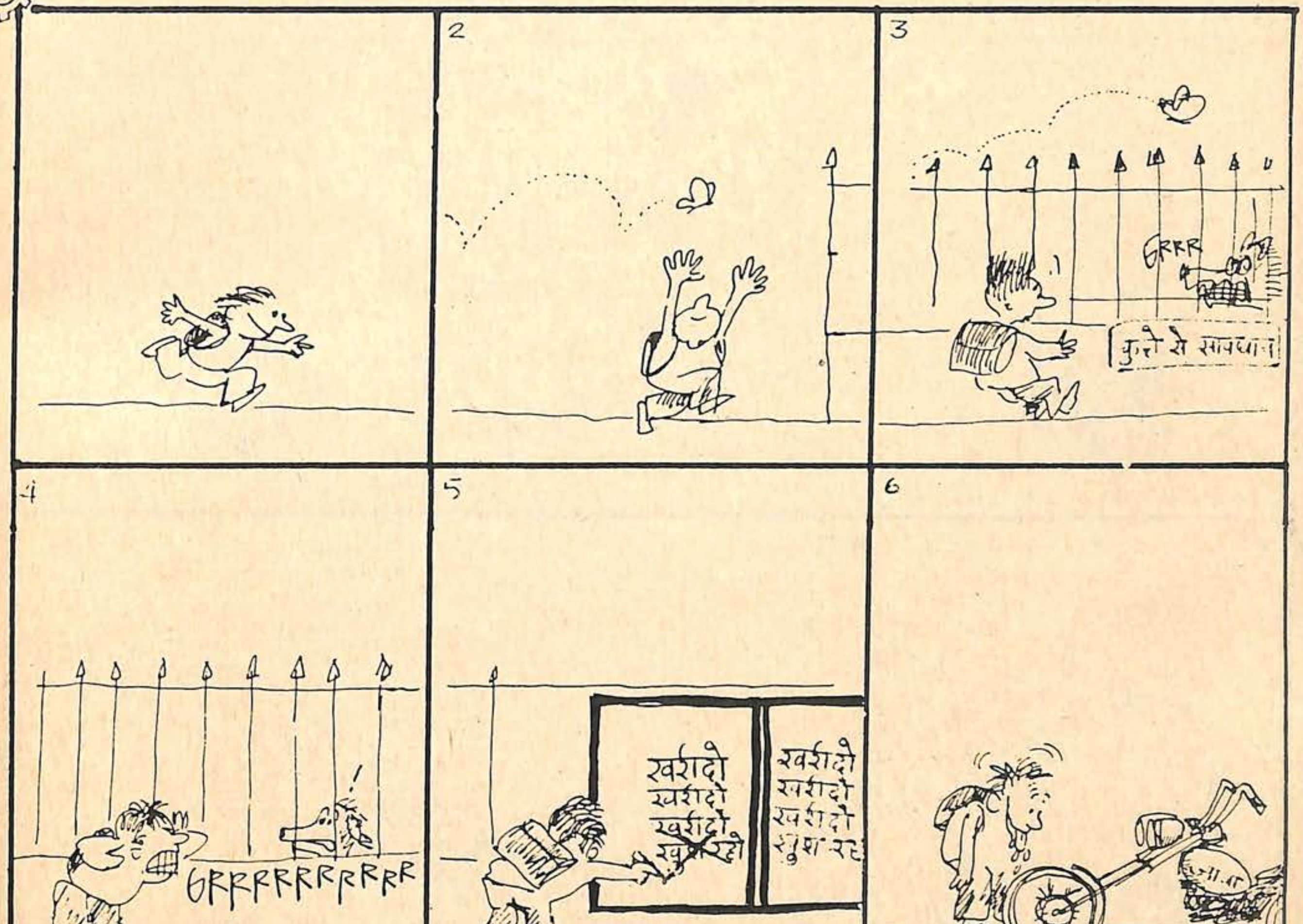
2
3
GRRR
कुत्ते से सावधान
4
GRRRRRRRRRRR
5
खरीदो
खरीदो
खरीदो
खुश रहो
खरीदो
खरीदो
खरीदो
खुश रहो
6
7
फ्रूटस
9
खच्चा!

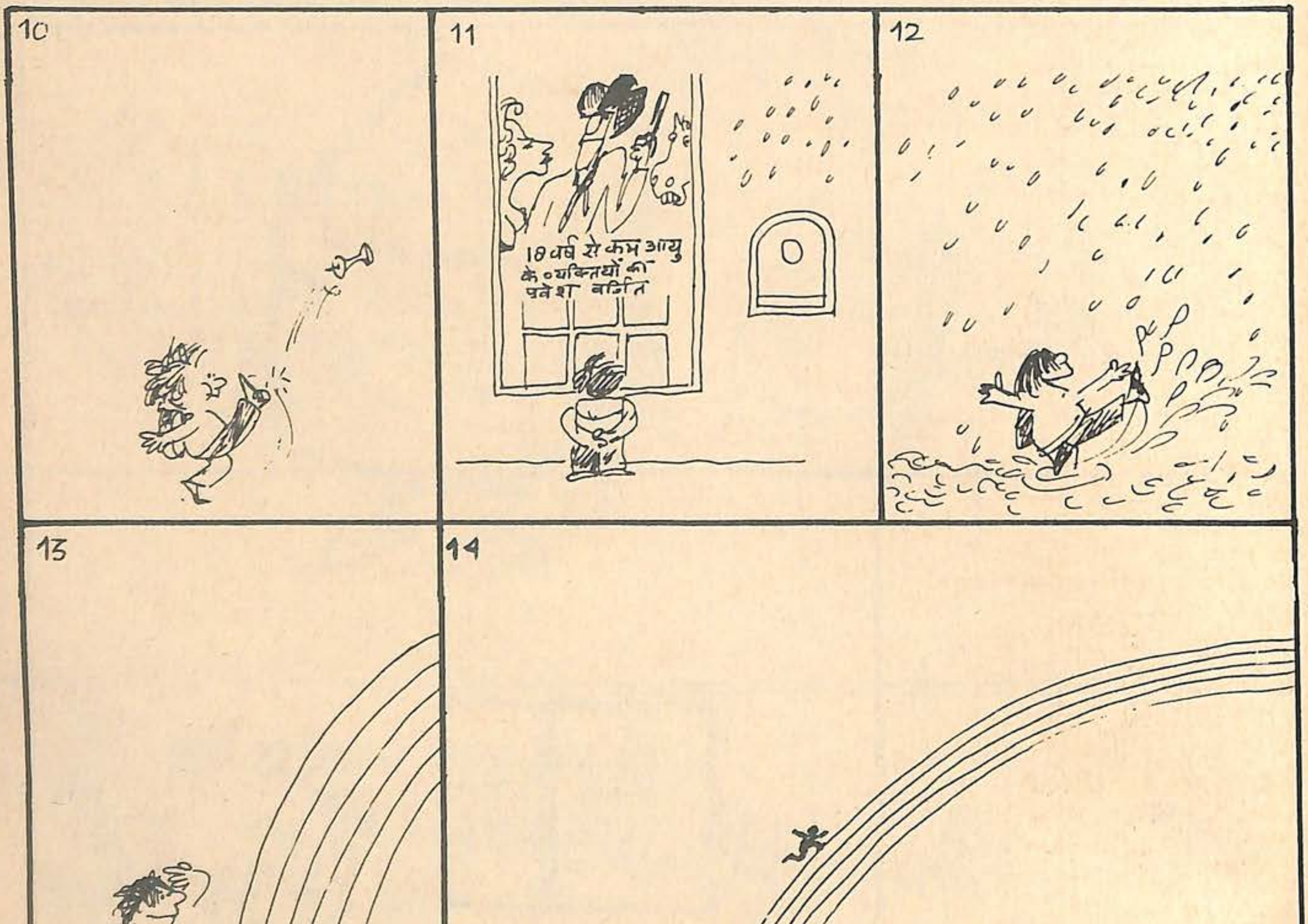
10
11
18 वर्ष से कम आयु
के व्यक्तियों का
प्रवेश वर्जित
12
13
14
15
वि
16
विद्याल
ओह..!!

...जहां उसूल बदलते ही नहीं हैं...

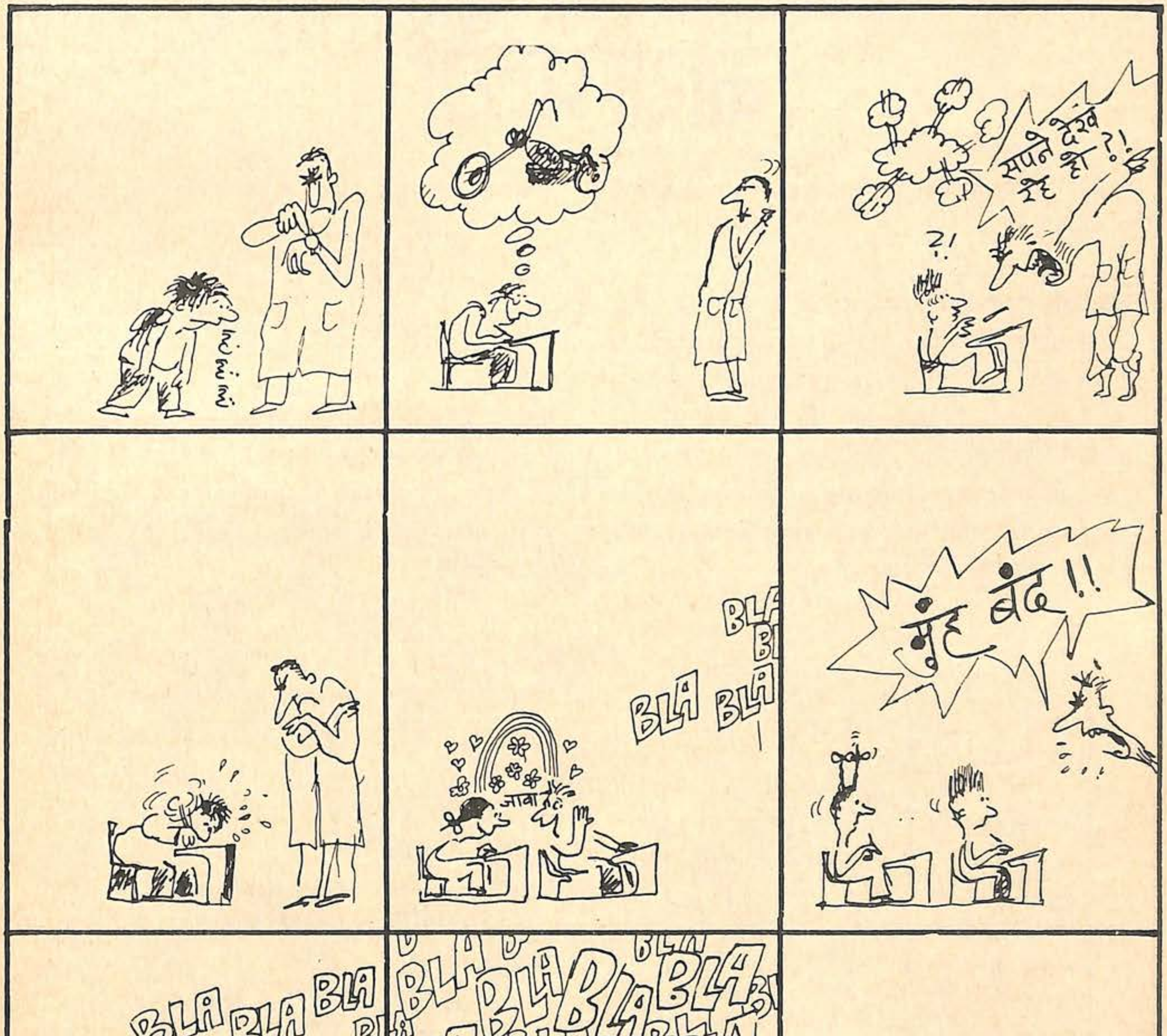

रूपांतरण : **विनोद रायना** (अगले अंक में जारी)

माथापच्ची

(1)

जाड़े में नारियल का तेल जम जाता है लेकिन सरसों का नहीं जमता, क्यों?

(2)

एक तर्क शास्त्री किसी छोटे कस्बे में पहुंचे। उन्हें अपनी हजामत बनवाने की सूझी। संयोग से उस कस्बे में हज्जामों की दो दुकानें थीं। तर्कशास्त्री ने पहली दुकान देखी। वह बेहद गंदी थी। हज्जाम के अपने बाल और दाढ़ी बड़ी हुई थी। कपड़े भी गंदे थे। दूसरी दुकान साफ सुथरी थी। वहां के हज्जाम के कपड़े साफ थे और बाल व दाढ़ी भी ठीक प्रकार से कटे हुए थे। तर्कशास्त्री ने तय किया कि वह पहली दुकान में बाल कटवाएगा! भला क्यों?

(3)

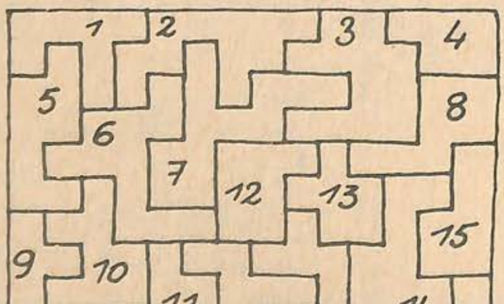

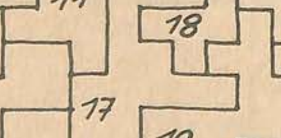

इस जाली में क, ख और ग टुकड़े कहां हैं?

(4)

डंक मारने का काम मादा मधुमक्खी करती है या नर?

(5)

एक घन है जिसकी छह सतहों पर 1 से 6 तक के अंक लिखे हैं। बताओ कुल 38 अंक प्राप्त करने के लिए घन को अधिक से अधिक, और कम से कम कितनी बार फेंकना पड़ेगा। साथ ही यह भी ध्यान रहे कि कोई भी अंक दो बार से अधिक नहीं आना चाहिए!

(6)

दो दोस्त बकरियां खरीदने गए। दुकानदार दुकान पर नहीं था। नौकर ने दो बकरियां पचास-पचास रुपए में बेच दीं। थोड़ी देर बाद दुकानदार लौटा। उसने नौकर से कहा, तुमने उनसे पांच-पांच रुपए ज़्यादा ले लिए। जाओ वापस करके आओ। नौकर दस रुपए लेकर उस ओर भागा जिधर वे दोनों बकरियां लेकर गए थे। जाते-जाते नौकर ने सोचा क्यों न कुछ पैसे मार दूं। मालिक को क्या पता चलेगा कि मैंने उन्हें कितने दिए। और उन दोनों को भी क्या पता कि दुकानदार ने वास्तव में कितने वापस किए।

दोनों दोस्त जल्द ही नौकर को मिल गए। नौकर ने दोनों को तीन-तीन रुपए वापस किए और कहा, एक बकरी पचास की नहीं बल्कि सैंतालीस रुपए की है। दोनों ने सोचा चलो, चाय के पैसे बचे।

यह स्पष्ट है कि नौकर ने चार रुपए मार दिए। आओ हिसाब लगाएं—

दोनों ने बकरियां खरीदी — 47 + 47 =	94
नौकर ने रख लिए	4
कुल	98

यह तो 98 ही हुए। दो रुपए कहां गए?

(7)

अफ्रीका के किसी गांव में 800 औरतें रहती हैं। उनमें से तीन प्रतिशत एक कान में बाली पहनती हैं। बाकी 97 प्रतिशत में से आधी औरतें दोनों कानों में बालियां पहनती हैं, और आधी एक भी बाली नहीं पहनतीं। बताओ कुल मिलाकर उस गांव की औरतें कितनी बालियां पहनती हैं?

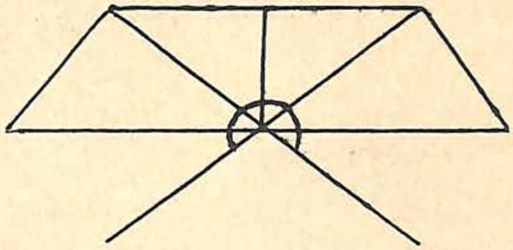

इस आकृति में अंग्रेजी वर्णमाला के सारे वर्ण छुपे हुए हैं। जरा ढूंढो तो!

□ के.के. डेनियल, बाजनियां, होशंगाबाद

(8)

एक गोल आकार को चार सीधी रेखाओं का उपयोग करके अधिक से अधिक कितने भागों में बांटा जा सकता है?

वर्ग पहेली - 17

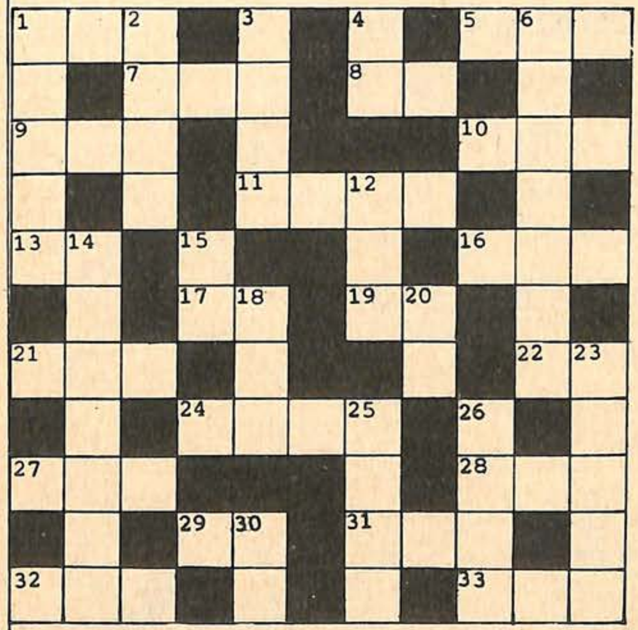

संकेत : बाएं से दाएं

(1) मीठा या सुरीला (3)
(5) जिसका मेल न हो (3)
(7) किंतु, जानवर (3)
(8) शर्म, उल्टा जला (2)
(9) सभा न जाने में रिश्तेदार (3)
(10) नामविहीन (3)
(11) सूरज का दिन या छुट्टी की दिन (4)
(13) लात पड़ी सिर पर तो नज़र आया पेंदा (2)
(16) जहां पैसा रखते हैं (3)
(17) खेल के पत्ते (2)
(19) बचाव (2)
(21) झटपट मेला में लफड़ा (3)
(22) भगवान कबूतर बटर में (2)
(24) तीरों का घर (4)
(27) मसला में नमस्कार (3)
(28) लपट भड़की तो उल्टा (3)
(29) एक काला पक्षी (2)
(31) दातौन देने वाला एक पेड़ (3)
(32) विश्वास यम के सिर और नमकीन की पूंछ पर (3)
(33) उल्टा सीधा नाटक (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

(1) सुईकी नोक का युद्ध (5)
(2) मन रजा किंतु दुख का समय (4)
(3) वाहन यदि मिले तो कारगर (4)
(4) खत्म करने के लिए शरीर का यह अंग लाओ (2)
(6) मसखरा बताए अपना नाम (2, 2, 3)
(12) तलवा नर का उसमें बंदर (3)
(14) ... जित देखूं तित लाल (2, 2, 2, 1)
(15) पेड़ पर लिपटी रहे (2)
(18) बदन (3)
(20) अम्ल का विपरीत भस्म (2)
(23) समस्या खत्म हो जाना (5)
(25) सैकड़ा में ईश्वर का पेय पदार्थ (4)
(26) बिना झपकाए लगातार देखना (4)
(30) हाथी का नाप (2)

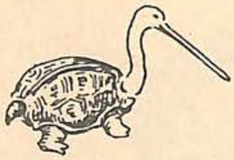

खिचड़ी

बतख था, साही भी (व्याकरण को गोलीमार)
बन गए 'बत्ताही' जी, क्या पता कैसे यार!

बगुला कहे कछुए से, बल्ले बल्ले मस्ती
कैसी बढ़िया चले रे, 'बगुछुआ' दोस्ती!

तोता मुंही छिपकली, है मुसीबत यार
कीड़े छोड़ मांग न बैठे, मिर्ची का आहार

छुपी रुस्तम बकरी ने, चली चाल इक आखिर
बिच्छू की गर्दन पे चढ़ी, धड़ से मिला सिर!

जिराफ कहे साफ, नहीं घूमता मैदानों में
टिड्डा लागे भला उसे, खोया है उड़ानों में!

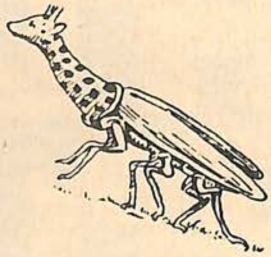

गाय सोचे ले ली मैंने, कैसी यह बीमारी
पीछे पड़ गई मेरे कैसे मुर्गे की सवारी!

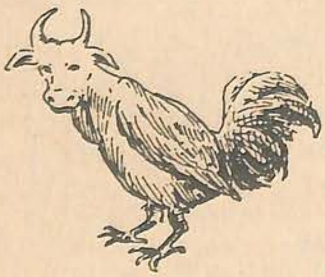

हाथी की हालत देखो, व्हेल मांगे बहती धार
हाथी कहे—जंगल का टेम है यार!

बब्बर शेर बेचारा, सींग कहां थे उसके
मिला हिरण जो, सींग बढ़ गए सिर पे!

☐ सुकुमार राय
बंगला से अनुवाद : लाल्टू

प्रसिद्ध फ़िल्मकार सत्यजित रॉय के पिता सुकुमार रॉय ने बच्चों के लिए कई सारी चीज़ें लिखीं। इनमें 'आबुल-ताबुल' बहुत प्रसिद्ध पुस्तक है। उन्होंने कुछ 'बेतुकी' रचनाएं भी लिखीं जो बहुत लोकप्रिय हुईं। इन रचनाओं के लिए चित्र भी उन्होंने ही बनाए हैं। कुछ 'बेतुकी' रचनाएं हम चकमक में समय-समय पर प्रकाशित करते रहेंगे।

सत्य की खोज

प्राचीन काल में एक राजा जनक थे। वह बड़े विद्वान थे। सारे देश में उनका नाम था। उस समय के बड़े-बड़े विद्वान उनके घर पर आकर ठहरा करते थे।

एक बार उन्होंने विद्वानों की एक सभा की और सबसे बड़े विद्वान को सोने से सींग मढ़ी एक हज़ार गाएं देने की घोषणा की। पांचाल प्रदेश के रहने वाले याज्ञवल्क्य उन दिनों देश में प्रसिद्ध विद्वान कहलाते थे। वह समस्त ज्ञान के ज्ञाता और अकाट्य बात कहने वाले समझे जाते थे। वह भी जनक की उस सभा में गए थे। दूसरे आए हुए सब विद्वान उनसे आतंकित थे और मन ही मन यह समझते थे कि पुरस्कार तो अंत में याज्ञवल्क्य को ही मिलेगा।

सभा जब प्रारंभ हुई तो विद्वानों में विभिन्न विषयों की चर्चाएं हुईं। प्रत्येक विद्वान प्रश्न पूछता, अपना मत रखता और उसके समर्थन में तरह-तरह के तर्क रखता था। हर एक के भाषण पर श्रोता बीच-बीच में तालियां बजाते थे। यह तालियां कभी किसी वक्ता की प्रशंसा में होती थीं तथा कभी किसी वक्ता को तिरस्कृत करने के लिए। इसलिए कभी मंच पर बैठे हुए विद्वानों और कभी श्रोताओं के समूह में उत्तेजना भी फैल जाती थी। तभी राजा जनक उठकर मंच पर तर्क और ज्ञान की कोई बात कहकर सब को शांत कर देते थे। भाषण फिर होने लगते थे। यह क्रम कई दिन तक चलता रहा। याज्ञवल्क्य भी इन दिनों बिलकुल चुप नहीं रहे। कहीं आवश्यकता पड़ने पर खड़े होकर वह कुछ बोलने से नहीं चूके। राजा जनक को यह चिंता थी कि, 'इतने सारे विद्वान यहां आए हुए हैं और सभी एक से बढ़कर एक ज्ञानवान हैं। सभी कुछ न कुछ बोल रहे हैं और इतने सारे लोग सुन रहे हैं। ....यह सुनने वाले भी तो कुछ तो निर्णय कर ही रहे होंगे कि इनमें से कौन सबसे अधिक विद्वान और ज्ञानवान है जिसे पुरस्कार मिलना चाहिए। ...यदि मैंने अपना निर्णय इन सब के विरुद्ध दे दिया तो लोग या तो मुझे मूर्ख समझेंगे—या मुझपर पक्षपात का दोष लगाएंगे।' वैसे दो दिन के भाषणों को सुनने के बाद राजा जनक सहित सब की राय यह बनती प्रतीत हो रही थी कि याज्ञवल्क्य से अधिक विद्वान कोई दूसरा नहीं है।

तीसरे और अन्तिम दिन विद्वानों की सभा प्रारम्भ होने पर एक नासमझ सी दिखाई देने वाली लड़की ने सीधे याज्ञवल्क्य से कुछ प्रश्न पूछने की अनुमति मांगी तो राजा जनक ने उसे अनुमति देकर मंच पर बुला लिया। याज्ञवल्क्य भी वहीं बैठे हुए थे। गार्गी नामक उस लड़की ने उनसे प्रश्न किया, "पृथ्वी के उस पार क्या है?"

याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया, "जल।"

"जल के उस पार?"

"वायु।"

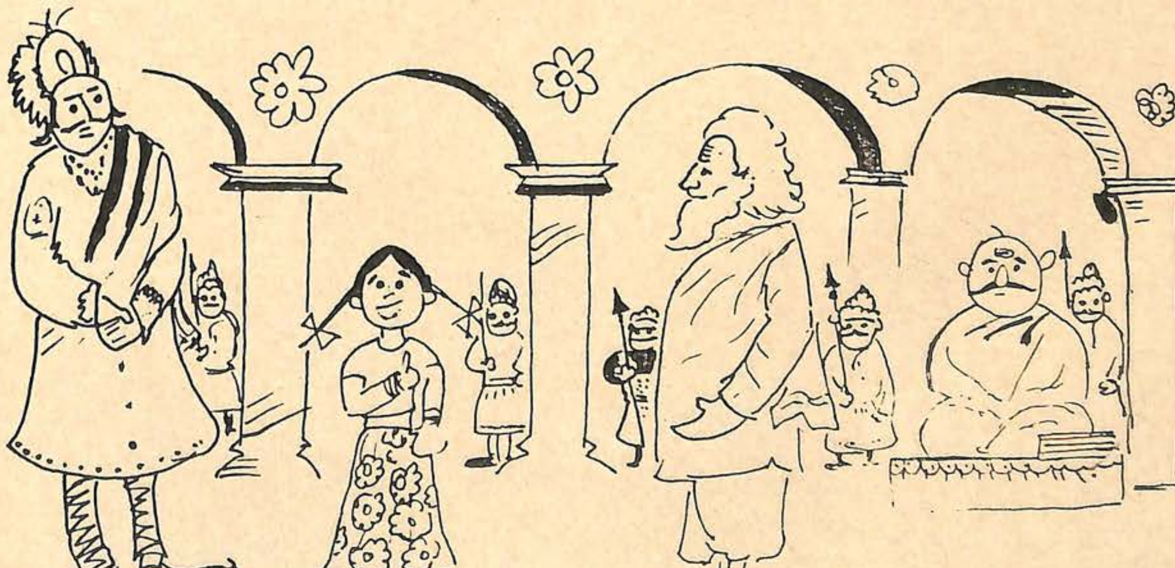

"वायु के उस पार?"

"आकाश।"

"आकाश के उस पार?"

"सूर्य।"

"सूर्य के उस पार?"

"ग्रह-नक्षत्र।"

"ग्रह-नक्षत्रों के उस पार?"

"शून्य।"

"शून्य के उस पार?"

"महाशून्य।"

"महाशून्य के पार?"

"परलोक।"

"परलोक के पार?"

...यह प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य को क्रोध आ गया। वह गरज कर बोले, "चुप हो मूर्ख लड़की। परलोक के पार भी कुछ होता है?"

गार्गी ने कहा, "क्यों नहीं? जब महाशून्य के बाद परलोक हो सकता है तो परलोक के उस पार कुछ क्यों नहीं हो सकता?"

याज्ञवल्क्य को यह सुनकर और क्रोध आ गया। बोले, "बैठ जा मूर्ख लड़की—वरना तेरा सिर कट कर पृथ्वी पर गिर जाएगा।"

गार्गी ने कहा, -"प्रश्न करने वाले का सिर कभी कटकर नहीं गिरता। सिर उसका कटकर गिरता है जिसके पास प्रश्न का कोई उत्तर नहीं होता।"

याज्ञवल्क्य क्रोध में आपे से बाहर हो गए और गार्गी को मारने के लिए झपटे। तभी राजा जनक ने उन्हें रोक लिया। गार्गी भी अपनी लाल आंखों से याज्ञवल्क्य को देख रही थी।

दोनों को समझा बुझा कर शांत करने के बाद राजा जनक ने गार्गी की ओर देखकर कहा, "प्रश्नों का कहीं अंत नहीं है गार्गी। ...पर जो उत्तर याज्ञवल्क्य ने दिए—वह तो ठीक ही थे। इसलिए..."—जनक अपना वाक्य पूरा करें—इससे पहले ही गार्गी बोल पड़ी, "सत्य का ज्ञान प्राप्त करना मनुष्य का स्वभाव है। ...प्रश्न करने से मुझे कोई नहीं रोक सकता।"

राजा जनक ने फिर कहना शुरू किया, "...इसलिए मैं यह घोषणा करता हूं कि सोने से मढ़े सींगोंवाली पांच सौ गाएं याज्ञवल्क्य को और पांच सौ गाएं गार्गी को दी जाएंगी।"

सभा में बैठे हुए सभी लोगों ने इस पर एक साथ तालियां बजाईं। गार्गी ने हाथ के संकेत से सबको शांत करते हुए ऊंची आवाज़ में कहा, "मैं यह गाएं नहीं लूंगी। मैंने पुरस्कार पाने के लिए प्रश्न नहीं किए थे। ...मैं तो सत्य को जानना चाहती थी।"

...और गार्गी ने गाएं नहीं लीं। सभा समाप्त हो गई और याज्ञवल्क्य वह एक हज़ार गाएं लेकर पांचाल लौट गए।

☐ **निरंकार देव सेवक**

सभी चित्र : मोहन देवलेकर

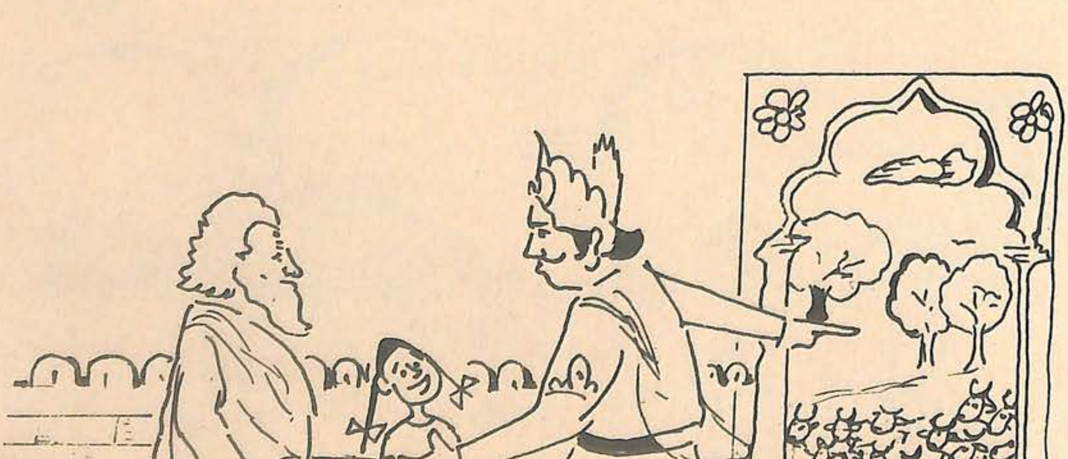

गिजु भाई
की कलम से..

खिड़की का कांच टूटा

रघु ने साहब से आकर शिकायत की, 'जीवन ने खिड़की का कांच तोड़ डाला।'

जीवन को साहब के सामने लाकर खड़ा किया गया। जीवन सीने पर हाथ बांधे अदब से मुंह नीचा किए साहब के सामने डरता-डरता खड़ा था।

साहब ने उससे कहा, 'जीवन! इसके लिए तुझे सजा मिलेगी। चार डंडे खाने पड़ेंगे। सब कक्षाओं में तुझे घुमाया जाएगा। और सबों के सामने एक-एक डंडा पड़ेगा।'

जीवन कांपता-कांपता यह बात सुनता रहा।

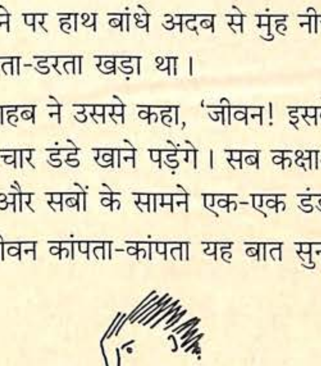

जरा सोच कर साहब जीवन से फिर कहने लगे, 'जीवन तुझको सजा देना मेरे लिए ज़रूरी हो गया है। पर मुझे यह क्यों करनी पड़ रही है, यह बात तुझे समझानी भी चाहिए।'

राघवजी समझदार मास्टर थे। नए जमाने के थे। ट्रेनिंग कॉलेज से शिक्षाशास्त्र के विचारों को उन्होंने बहुत अच्छी तरह से हृदयंगम किया था। उनकी मान्यता थी कि बालक को सजा देने का कारण समझाया जाना चाहिए, अन्यथा सजा देना निष्फल जाता है।

मास्टर साहब कहने लगे, 'देख जीवन, अगर यह कांच तुम्हारा अपना होता तो तेरे पिता तुझे पीटते। जबकि यह शाला का कांच है, इसलिए यह हमारी अपनी सम्पत्ति तो है नहीं। परायों की चीज़ों को तोड़ना तो गलत काम ही कहा जाएगा ना।'

जीवन बोला, 'लेकिन साहब...'

राघवजी ने बीच ही में कहा, 'लेकिन-वेकिन बाद में; एक बार जो मैं कह रहा हूं वह सुन ले। इस तरह से अगर लड़के शाला का कांच तोड़ेंगे तो कैसे काम चलेगा? कांच तूने तोड़ा, इसके हर्जाने के पैसे तो तेरे पिता को भरने ही पड़ेंगे। ऐसा काम तू फिर से न करे इसकी सजा तो तुझे दी ही जानी चाहिए। इससे दूसरों को भी सबक मिलेगा कि कांच तोड़ने का क्या नतीजा होता है। समझे? इसी कारण से तुझे दंड दिया जा रहा है। तुझ से हमें कोई द्वेष-वैर नहीं है। यह काम करना ही महत्त्व की बात है।'

मास्टरजी पूरी बात कह कर चुप हो गए और बोले, 'अब बता तू क्या 'लेकिन-वेकिन' कर रहा था?'

जीवन बोला, 'यह सब बिल्कुल सही है। आपने मुझे सजा का कारण बताया, सो ठीक है, पर कांच टूटा कैसे। यह तो आप सुनेंगे ना? कांच टूटने का कारण तो आप देखेंगे ना?'

शिक्षक, 'क्या कारण था? चाहे जो कारण हो, कांच तुम्हीं ने तोड़ा है ना?'

जीवन, 'जी नहीं, कांच मैंने नहीं तोड़ा, बल्कि वह टूट गया।'

शिक्षक, 'यह भी ठीक है। कांच के टूटने की बात तो मूल में सही ही है ना?'

जीवन, 'पर वह कैसे टूटा, यह तो आपको देखना ही चाहिए। फिर चाहे आप मुझे सजा दीजिए!'

शिक्षक, 'अच्छा, बोल! क्या कहना है तुझे?'

जीवन, 'यह बात सच है कि मेरा सिर कांच से टकराया और कांच टूटा। पर असल में रावजी मुझ पर आकर गिरा और यह घटना घटी।'

शिक्षक, 'लेकिन रावजी और तुम यों अंधे होकर बेहोशी में कहां भागे जा रहे थे कि तभी रावजी तुझ से आ टकराया?'

जीवन, 'हम दोनों जोरों से दौड़ते जा रहे थे।

शिक्षक, 'कहां जा रहे थे?'

जीवन, 'मैं संडासी लेने और रावजी लकड़ी लेने।'

शिक्षक, 'इनकी क्या ज़रूरत पड़ गई?'

जीवन, 'हमारी कक्षा में बिच्छू निकला था और शिवजी मास्टरजी ने कहा कि अरे कोई संडासी और दबाने को लकड़ी लाओ। मैं दौड़ा और मेरे पीछे-पीछे रावजी दौड़ा। रावजी ज़ोर से दौड़ते-दौड़ते मुझ पर आ गिरा और जल्दबाजी में मैं खिड़की से जा टकराया; और कांच ढीला होगा या कौन जाने, वह निकल कर नीचे जा गिरा और टूट गया।'

राघवजी मास्टर विचार में खो गए, 'अब क्या करें? उलझन हो गई।' बोले, 'जरा ध्यान रख कर तो दौड़ना था?'

जीवन, 'मैं तो बिल्कुल ठीक ही चला जा रहा था, लेकिन पीछे से रावजी का धक्का लगा और मैं खिड़की से जा टकराया। उल्टे खिड़की से मेरा सिर टकराया और मेरे माथे पर चोट आई। देखिए यह गांठ की सूजन?'

राघवजी, 'पर तुम रावजी की शिकायत क्यों नहीं लेकर आए? और रावजी भी कैसा है—बेअक्ल और जल्दबाज!'

जीवन बोला, 'पर इसमें वह क्या करे? बिच्छू के लिए लकड़ी लाने की हड़बड़ी में वह मुझसे टकरा गया। उसने कोई जान-बूझ कर धक्का थोड़े ही मारा था!'

राघवजी और भी उलझन में पड़ गए। बेचारे का सिर फूटा फिर भी जीवन रावजी से लड़ता नहीं। बल्कि कहता है कि उतावली में रावजी क्या करता? तब मुझे भी क्या ऐसा नहीं करना चाहिए? शाला का कांच बड़ी चीज़ है या जीवन का सिर? और कांच व सिर किसलिए टूटे? शिवजी मास्टरजी ने कहा था कि संडासी और लकड़ी आओ; लड़के दौड़े। इसमें दोष किसका?

राघवजी बोले, 'जाओ जीवन! तुझ को सजा नहीं दी जा सकती। जाओ, ऐसे हो ही जाता है कभी-कभी।' फिर वे मन ही मन बोले, 'सजा देने से पहले सजा का कारण समझाते-समझाते सजा न देने का कारण ठीक ही मेरे समझ में आया। यूं तो कितनी ही गलत सजाएं हो जाती होंगी। आइंदा सजा देने का कारण पहले समझाया जाना चाहिए।'

'शिक्षक हों तो...' से। मौण्टीसरी बाल शिक्षण समिति, राजलदेसर के सौजन्य से। गुजराती से अनुवाद : रामनरेश सोनी।

सभी चित्र : जया

माथा पच्ची : उत्तर माह जनवरी के

1. आ
   आम
   काम
   मकान
   कमीना।
2. 1. जड़ 2. पेड़ की छाल 3. फल 4. बीज 5. फूल।
3. चार घंटे।
4. त्रिभुज एक और चौदह समान हैं।
5. बड़े डिब्बे में 1.92 किलोग्राम और छोटे डिब्बे में 0.94 किलोग्राम चाय है।
7. घोड़ा 7 और गधा 5 बोरियां ढो रहा था।

वर्ग पहेली - 16 : हल

बाएं से दाएं

(1) मातम (३) जनमत (5) पग (6) दवात (7) आलस (8) लहू (10) खाना (12) भारत (15) बस (17) दरिया (18) मालिक (20) साल (21) नरभक्षी (22) हमाम।

ऊपर से नीचे

(1) मालामाल (2) मवाद (3) जग (4) तपस (5) पतन (7) आदर (11) वाक्या (13) तब (14) कमाल (16) समागम (17) दमन (19) कलह (20) साक्षी।

(पृष्ठ 25 से जारी)

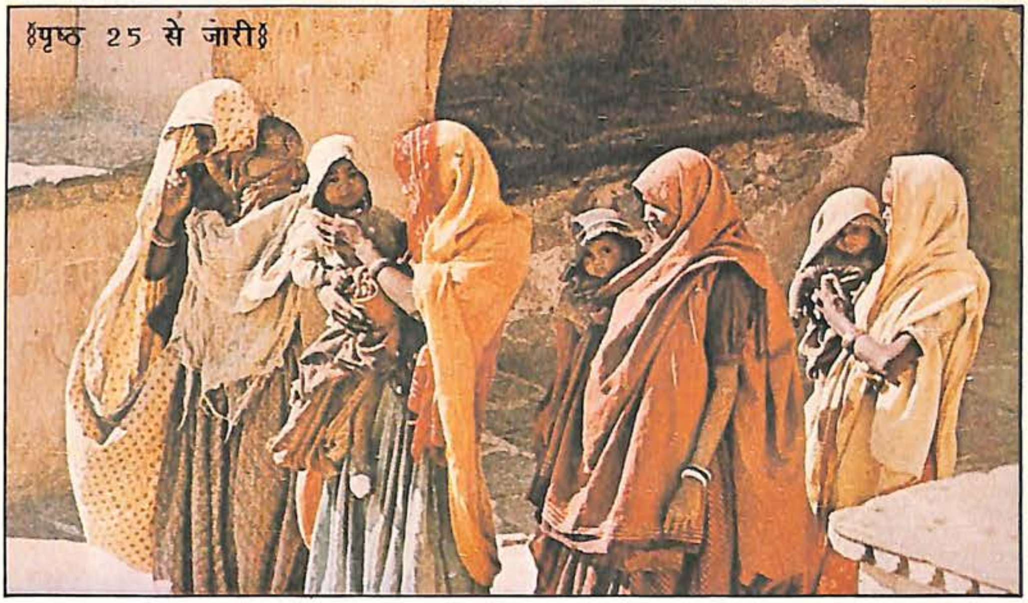

आज भारत की जो छवि उभरती है वह एक आत्मनिर्भर देश की छवि नहीं है। एक प्रजातांत्रिक देश के लिए यह ज़रूरी है कि वह केवल बाहर से ही नहीं वरन् अंदर से भी मज़बूत बने।

देश और दुनिया का भविष्य इन बच्चों की इस उन्मुक्त हंसी में छुपा है—अब यह हम पर निर्भर है कि यह मुस्कान बरकरार रहे या...!

पंजीयन क्रमांक 1317/सी/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्टार द्वारा पंजीकृत।
डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/431/89

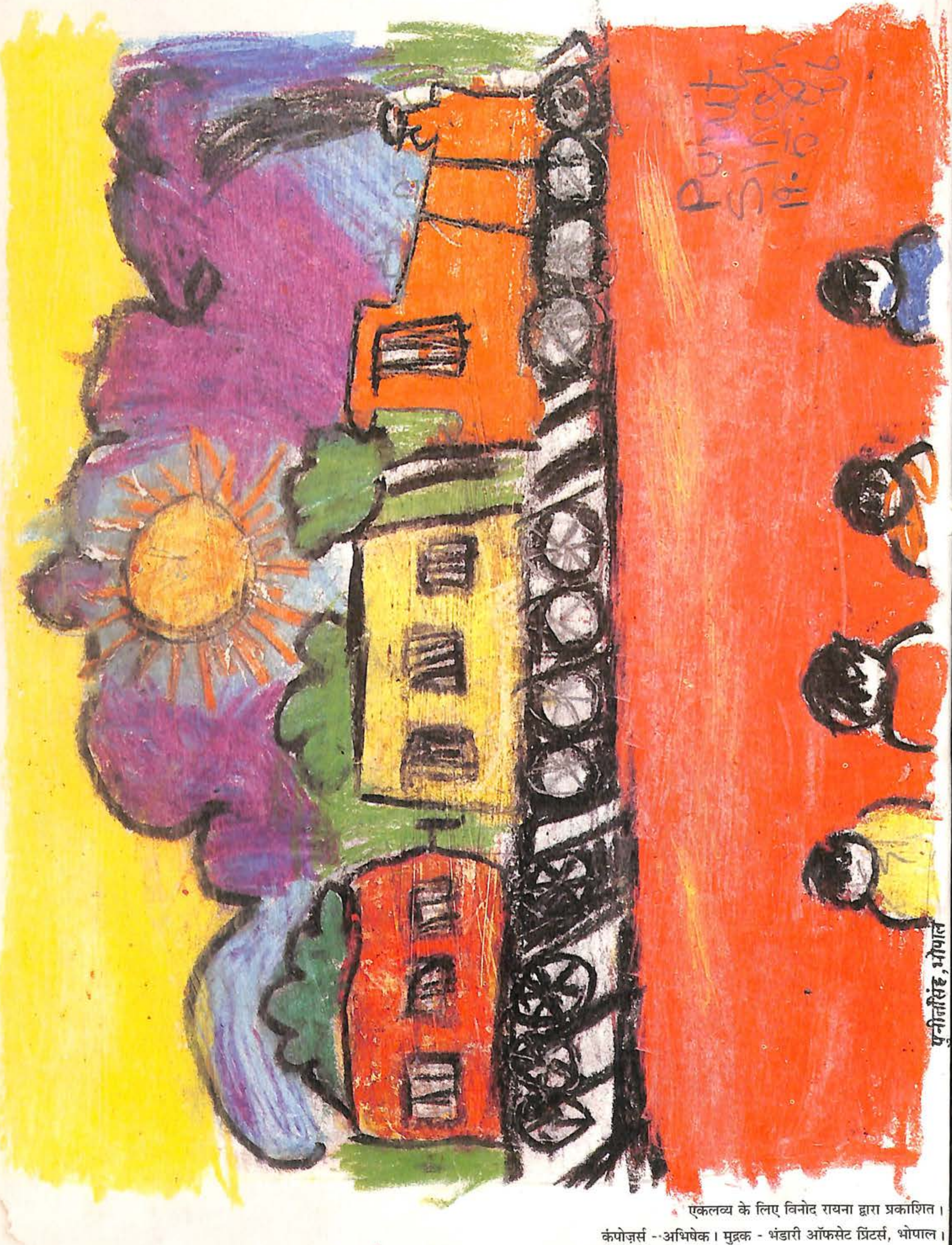

एकलव्य के लिए विनोद रायना द्वारा प्रकाशित।
कंपोज़र्स --अभिषेक। मुद्रक - भंडारी ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल।